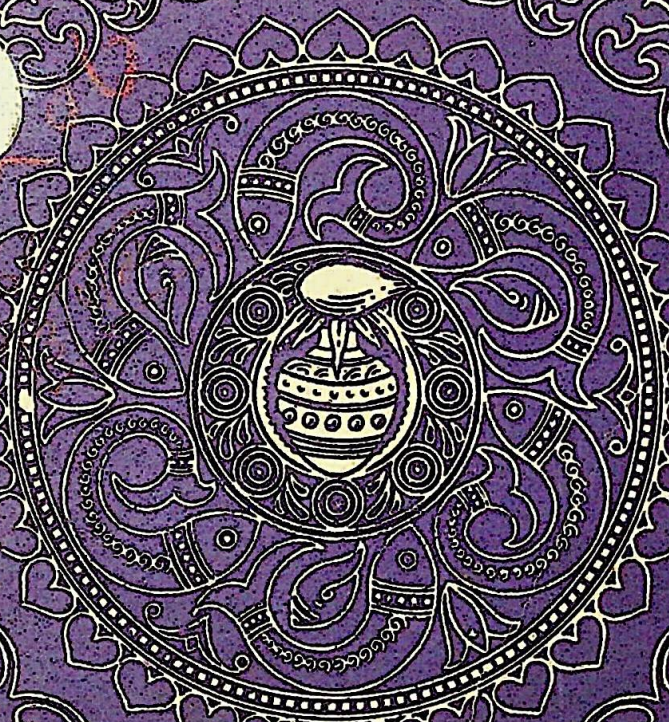


1
433



६३ H.A. २०

जीवन-दान

१५२३५ जयप्रकाश नारायण

अ. भा. सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

3Vx
152J5J

0980

मह प्रकाश मरा ००१

मि. ...

महोदय. सु. म. १०-१०-१९४८

[illegible]

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी ।

3Vx

0988

152J5J

ਮੁਕਤੀ ਮਿਲੇਗੀ

ਮੁਕਤੀ ਮਿਲੇਗੀ

53

सिद्धिपति मु. म. १०-१०-१९४८

०९४८

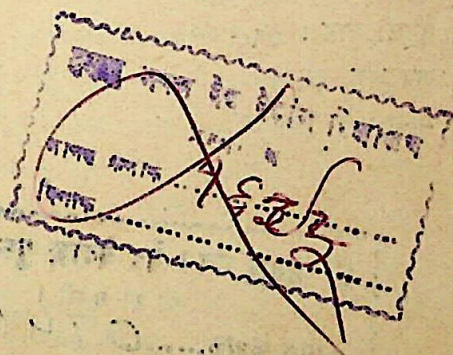
५ - ५१ न

जयप्रकाश नारायण

जयप्रकाश नारायण

जयप्रकाश नारायण

जयप्रकाश नारायण



१९५५

आखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, काशी

प्रकाशक :

अ० वा० सहस्रबुद्धे

मंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ

वर्धा (म० प्र०)

४ Vx
152355

पहली बार : १५,०००

अक्तूबर, १९५५

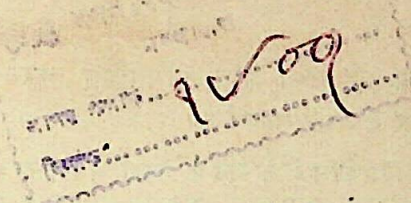
मूल्य : चार आना

❀ मृगधु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय ❀	
धारा : ग सी ।	
आगत क्रमांक.....	0749.....
दिनांक.....	7/6.....

मुद्रक :

सम्मेलन मुद्रणालय

प्रयाग



पुस्तक-परिचय

१८ अप्रैल, १९५१ के दिन पोचमपल्ली (तेलंगाना) में भूमिदान-यज्ञ की शुरुआत हुई। यज्ञ जब सफलता की ओर अग्रसर होता है, तब उसमें से यज्ञ-देवता प्रकट होता है। भूमिदान-यज्ञ की शुरुआत के ठीक तीन वर्ष बाद बोधगया में वार्षिक सर्वोदय सम्मेलन के मौके पर 'जीवन-दान' प्रकट हुआ। ता० १९ अप्रैल, १९५४ को तीसरे पहर सम्मेलन के अधिवेशन में विभिन्न प्रान्तों के भूदान कार्यकर्ता एक के बाद एक अपने विचार सम्मेलन के सामने रख रहे थे। इसी सिलसिले में पहले से निर्धारित कार्यक्रम के मुताबिक जब सम्मेलन की अध्यक्ष श्री आशा बहन आर्यनायकम् ने श्रद्धेय जयप्रकाशजी से अनुरोध किया कि वे कुछ कहें तथा जयप्रकाशजी ने बोलने की अनिच्छा और अपने हृदय का भारीपन व्यक्त करते हुए बोलना शुरू किया, तब किसीको-खुद जयप्रकाशजी को भी-इस बात का कोई आभास नहीं था कि उनके मुँह से अहिंसक क्रान्ति के इस यज्ञ के लिए 'जीवन समर्पण' की घोषणा होनेवाली है।

पर बोलते-बोलते उनकी वाणी में ओज बढ़ता गया और दृढ़ता आती गयी। शुरू की हिचकिचाहट और खिन्न मनःस्थिति की जगह भूदान-यज्ञ आन्दोलन से प्रकट हुई अहिंसात्मक क्रान्ति की प्रक्रिया में अटल विश्वास और निश्चयात्मक बुद्धि का दर्शन हुआ और अन्त में सम्मेलन-मंडप में एकत्रित विराट् जन-

समुदाय को स्तब्ध और अभिमंत्रित करनेवाला 'जीवन-दान' का वह मंगल संकल्प !

जयप्रकाशजी के खुद के शब्दों में संकल्प के वे शब्द 'अनायास ही' उनके मुँह से निकल पड़े थे, अर्थात् इसके लिए उन्हें उस समय विचारपूर्वक कोई प्रयत्न (Conscious Effort) नहीं करना पड़ा। पर मानस में तो उसकी तैयारी अन्दर ही अन्दर वर्षों से हो रही थी। फल धीरे-धीरे पेड़ पर पकता रहता है और फिर एक क्षण आता है, जब बिना किसी बाहरी प्रयत्न के वह पका हुआ फल अपने आप गिर पड़ता है। वही बात जयप्रकाशजी के 'जीवनदान' की हुई। जीवनदान की घोषणा की उस स्थूल घटना के पहले किस तरह वर्षों तक उनके मानस में इसकी तैयारी हो रही थी, जीवनदान की पार्श्वभूमि बन रही थी, इसका वर्णन खुद जयप्रकाशजी के शब्दों में पाठक पहली बार इस पुस्तिका में पढ़ेंगे। 'जीवनदान की भूमिका' में उन्होंने अपने क्रमिक मानस-परिवर्तन का चित्र प्रस्तुत किया है।

जयप्रकाशजी द्वारा जीवनदान की इस ऐतिहासिक घोषणा के बाद सम्मेलन का सारा रंग और रुख बदल गया। निर्धारित कार्यक्रम में और भी लोगों के नाम बोलनेवालों में थे, पर बदली हुई परिस्थिति में अब विनोबा ही कुछ कह सकते थे। विनोबा बोले, पर उनके मन में भी भावनाओं का प्रवाह वह रहा था। जयप्रकाशजी के जीवन-समर्पण की तुलना 'रुक्मिणी-पत्रक' के प्रसंग से करते हुए उनका गला रुँध गया—आँखें भर आयीं ! विनोबा के मनोमन्थन का परिणाम दूसरे दिन सबेरे के अधिवेशन में पढ़े गये उनके खुद के जीवन-समर्पण के पत्र के रूप में प्रकट हुआ।

इस प्रकार 'जीवनदान' की पावन गंगा किन परिस्थितियों में, किस तरह प्रकट हुई—इस घटना-चक्र का चित्र इस पुस्तक के पहले अध्याय में मिलेगा। इस अध्याय में स्वयं जयप्रकाशजी के शब्दों में दी हुई 'जीवनदान की भूमिका' के बाद बोध-गया-सम्मेलन का उनका वह भाषण दिया है, जिसके अन्त में उन्होंने जीवनदान की घोषणा की। उसके बाद विनोबाजी का वह भाषण, जिसका ऊपर जिक्र किया है, और अन्त में उनके द्वारा जयप्रकाशजी को दिया गया वह ऐतिहासिक पत्र, जिसमें वर्षों पहले से समर्पित जीवन के दुवारा समर्पण (Re-dedication) की घोषणा करके विनोबा ने सामाजिक मर्यादा-पालन का अनुपम उदाहरण पेश किया है। इस प्रकार पहला अध्याय जीवनदान यज्ञ की शुरुआत का इतिहास है।

दूसरे अध्याय में 'जीवनदान' के तात्त्विक तथा व्यावहारिक पहलुओं पर जयप्रकाशजी के विचार दिये गये हैं, जिससे पाठक समझ सकें कि जीवनदान का मतलब क्या है और जीवनदान करनेवाले को क्या करना चाहिए। तीसरा अध्याय 'जीवनदानियों से' है, जिसमें विनोबा, जयप्रकाशजी तथा धीरेन भाई के विचार मार्गदर्शन की दृष्टि से दिये गये हैं।

आशा है, इस पुस्तक के प्रकाशन से जीवनदान का स्वरूप लोगों के सामने स्पष्ट हो जायगा और 'भूदान-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति' के युग-धर्म के लिए सतत विनोबा तथा श्रद्धेय जयप्रकाशजी के चरण-चिह्नों पर चलकर जीवन-समर्पण करने की प्रेरणा उन्हें मिलेगी।

गया (विहार)

—सिद्धराज ढड्डा

२ अक्तूबर, १९५५

सहमंत्री, अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ

अनुक्रम

१. जीवन-समर्पण

७—३०

जीवनदान की भूमिका	जयप्रकाश नारायण	७
जीवनदान की गंगोत्री	जयप्रकाश नारायण	१३
आशीर्वाद	विनोबा	२२
जीवन-समर्पण	(दो ऐतिहासिक पत्र)	२५
जीवनशुद्धि का संकल्प	विनोबा तथा जयप्रकाश नारायण	२६

२. जीवनदान क्यों ?

जयप्रकाश नारायण

३१—४६

[जीवन-दान का आशय, अहिंसक क्रांति का अग्र-चरण—भूदान, गांधी-विचार का पुनर्जीवन, आरम्भ भूमि से क्यों ?, रचनात्मक काम और कार्यकर्ता, राजनीतिज्ञों का रुख, भूदान और राजनीति, अहिंसक लोकतन्त्र की ओर, जीवनदान की विशेषता, युग की चुनौती, एकमात्र रास्ता, क्रांति का मुहूर्त]

३. जीवनदानियों से

४७—६१

एकाकी पुरुषार्थ	विनोबा	४७
निरन्तर तपना है	"	४८
आचरण के सूत्र	"	५०
जीवनदानी से अपेक्षाएँ		५७

(१) संकलित

(२) धीरेनभाई का जीवनदान

जीवनदान की भूमिका

एक समाजवादी की हैसियत से देश की जमीन के सही बँटवारे का सवाल मेरे सामने शुरू से ही रहा है। समाजवादी पार्टी का आर्थिक कार्यक्रम बनाने का मुझे जब-जब मौका मिला, तब-तब भू-वितरण का विषय मैंने उसमें अवश्य रखा। पिछले आम चुनाव के अवसर पर समाजवादी पार्टी के घोषणा-पत्र में भी इस विषय को बड़े महत्त्व का स्थान दिया गया था।

भू-वितरण का तरीका हम लोगों के सामने कानून का ही तरीका था। भूमिहीनों का संगठन हो, वितरण का आन्दोलन चले, जगह-जगह जमीन के वारे में संघर्ष किया जाय और या तो चुनाव जीतकर शासन अपने हाथ में लिया जाय तथा जमीन का बँटवारा किया जाय अथवा ऐसी परिस्थिति पैदा की जाय कि चाहे जिस पक्ष का शासन हो, उसे भू-वितरण करना ही पड़े। कांग्रेस-सरकार ने अपने भू-सुधार के कार्यक्रम में वितरण को स्थान नहीं दिया था। इसलिए समाजवादी पार्टी को अपने प्रचार-कार्य के लिए यह एक बड़ा मुद्दा मिल गया था।

सन् '५२ में पंचमढ़ी में समाजवादी पार्टी का सम्मेलन हुआ था, जिसके लिए भू-वितरण का प्रस्ताव मैंने लिखा था। मेरे मन में उस वक्त यह था कि सारे देश में भू-वितरण के लिए एक

जोरदार आन्दोलन चलाया जाय। इसके लिए पचमढ़ी में एक अखिल भारतीय कमेटी भी बना दी गयी थी। इधर उस समय तक भूदान-आन्दोलन शुरू हो चुका था। यद्यपि उसमें मैं प्रत्यक्ष भाग नहीं ले रहा था, फिर भी उस प्रस्ताव में भूदान-आन्दोलन का स्वागत किया गया था और उसके लिए पार्टी का समर्थन भी प्राप्त किया गया था। उस समय तक मेरे सामने यह स्पष्ट नहीं था कि समाजवादी पार्टी का भू-वितरण आन्दोलन और भूदान-आन्दोलन किस प्रकार साथ-साथ चलेंगे और उनमें परस्पर का संबंध क्या होगा; लेकिन इतना तो था ही कि समाजवादी आन्दोलन भी शान्तिमय तरीके से चलाया जानेवाला था। फिर भी उसके पीछे वर्ग-संघर्ष की भावना थी।

पचमढ़ी के बाद ही मैं विनोबाजी से मिलने के लिए बाँदा गया। उनसे बातचीत करके भूदान-आन्दोलन के दर्शन और कार्य-पद्धति को समझने की कोशिश की। उसके बाद गया जिले में मुझे भूदान का प्रत्यक्ष अनुभव हुआ। ज्यों-ज्यों इस आन्दोलन की गहराई में प्रवेश करता गया, मुझे यह प्रतीत होने लगा कि देश की भू-समस्या के हल करने का इससे बढ़कर कोई दूसरा तरीका हो नहीं सकता। किसी एक पक्ष द्वारा भू-वितरण का आन्दोलन चलाने की अपेक्षा विनोबाजी का पक्षातीत आन्दोलन चलाने का रास्ता मुझे ज्यादा सही लगा। धीरे-धीरे मुझे तो यहाँ तक प्रतीत होने लगा कि विनोबाजी ने न सिर्फ भू-समस्या का हल हमारे सामने रखा है, बल्कि भूदान-आन्दोलन अहिंसक तरीके से सामाजिक-क्रांति तथा समाज के नव-निर्माण का पहला कदम है। महात्माजी ने अहिंसक क्रांति और नव समाज-

निर्माण के सैद्धान्तिक विचार देश और दुनिया के सामने रखे थे, लेकिन उनके जाने के बाद धीरे-धीरे यह चीज आँखों से ओझल होने लगी थी और देखने में नहीं आ रहा था कि उन विचारों पर कहीं अमल हो रहा हो। बल्कि होने यह लगा था कि राजसत्ता हाथ में आने के बाद उनके अनुयायियों ने गांधीजी का रास्ता छोड़कर पाश्चात्य ढंग के राज्यतंत्र का रास्ता अख्तियार कर लिया। राज-शक्ति के द्वारा ही समाज-परिवर्तन का काम वे करना चाहते थे। यह भी देख रहा था कि समाज-रचना का कोई स्पष्ट रूप भी उनके सामने नहीं था। ऐसा लगता था कि वे वर्तमान समाज में थोड़ा-बहुत फेर-बदल करके उसे कायम रखना चाहते हैं, जैसे किसी जर्जर मकान में इधर-उधर चिप्पी लगाकर उसे खड़ा रखा जाय।

इस समय मेरे मन में एक नया चिन्तन चल रहा था। मेरे विचारों का विकास एक और ही दिशा में हो रहा था। पहले मार्क्सवाद पर मेरी आस्था थी। लेकिन इधर कुछ दिनों से मुझे ऐसा विश्वास होने लगा था कि भौतिकवादी दर्शन के आधार पर समाजवादी समाज-रचना नहीं हो सकती। मुझे यह साफ देखने लगा था कि गांधीजी का यह कहना बिल्कुल सही था कि मानव-निर्माण के बिना समाज-निर्माण असंभव है और मानव-निर्माण का आधार भौतिकवाद नहीं बन सकता। यहाँ तक तो मेरा विचार भूदान-आन्दोलन में प्रवेश करने के पहले पहुँच चुका था। आगे चलकर जब मुझे भूदान-आन्दोलन का अधिक परिचय हुआ, तो मैंने अनुभव किया कि मानव-निर्माण अथवा मानवीय क्रांति के लिए यह एक महान् प्रयास है। समाजवादी आन्दोलन में

मानव-निर्माण का कोई कार्यक्रम दीखता नहीं था। समाजवादी तंत्र के जो नमूने दुनिया में जहाँ-जहाँ दिखलाई पड़े या जिस तंत्र का स्वरूप समाजवादी विचारधारा में पाया जाता था, उससे मुझे संतोष नहीं था। समाजवादी समाज-रचना में राज्य-शक्ति का विस्तार होगा, ऐसा मुझे लगता था। समाजवाद को राज्यवाद से कैसे बचाया जाय, यह प्रश्न आज भी हर विचारवान समाजवादी के सामने है। इस प्रश्न का समाधानकारक उत्तर महात्माजी के विचारों और विनोबाजी के इस क्रांतिकारी आन्दोलन में मुझे मिला। धीरे-धीरे मुझे विश्वास हो गया कि समाजवाद के सही उद्देश्य और सही मूल्य महात्माजी के सर्वोदय में मिलेंगे। सर्वोदय की स्थापना राज-शक्ति के द्वारा नहीं हो सकती, बल्कि यह भूदान-आन्दोलन तथा उसी प्रकार दूसरी प्रक्रियाओं के द्वारा नैतिक, वैचारिक तथा जीवन-मूल्यों में क्रांति करके ही की जा सकती है। इतनी दूर चलकर अब मैं ऐसी जगह पहुँच गया था कि इस बात का संकल्प करूँ और अन्य सभी कामों से अपने को खींचकर सारा समय अहिंसक क्रांति द्वारा सर्वोदय-निर्माण में लगा दूँ। यह मेरी मनःस्थिति थी कि जब बोधगया-सम्मेलन के मंच पर बोलने के लिए खड़ा हुआ, तो अनायास ही संकल्प के वे शब्द मेरे मुँह से निकल पड़े। मुझे ऐसा कुछ नहीं लगा कि मैं कोई नया कदम उठा रहा हूँ।

उस समय अपने मन में एक और विचार मैं देख रहा था कि भूदान में काम करनेवाले इतने थोड़े हैं, और उनमें भी बहुत कम लोग हैं, जो पूरी श्रद्धा से अपना सारा समय दे रहे हों। मुझे लगता था कि जब तक नये कार्यकर्ता बड़ी तादाद में इस आन्दोलन

के विचारों और आदर्शों से प्रभावित होकर नहीं आते, तब तक यह आन्दोलन तेजी से नहीं बढ़ता।

कार्यकर्ताओं के शिविरों और सभाओं में यह प्रणाली चल पड़ी थी कि उनसे संकल्प कराया जाता था कि कौन कितना समय इस काम में देता है। कोई कहता था सन् '५७ तक, कोई दो साल, कोई एक साल और कोई-कोई साल में एक माह या माह में एक सप्ताह समय देने की बात करता था। मुझे लगता था कि ऐसे निर्बल संकल्प से हमारा काम पूरा होनेवाला नहीं है। मैं अपने व्यक्तिगत अनुभव से यह देख रहा था कि जो भी व्यक्ति भूदान-आन्दोलन के पीछे रहे हुए विचार को अच्छी तरह समझ लेगा, वह यह निश्चय किये बगैर नहीं रह सकता कि अपना सारा जीवन इसीमें खपा देना चाहिए। मेरे कहने का यह मतलब नहीं कि जो दो-चार वर्षों का या थोड़े समय के लिए अपना पूरा या आंशिक समय देते हैं, उनका कुछ मूल्य नहीं, अथवा उनसे आन्दोलन को शक्ति नहीं मिलती। लेकिन क्रांति के लिए जिस दृढ़ संकल्प, लगन और आग की जरूरत है, वह यहाँ नहीं है, यह मानना ही पड़ेगा। क्रांति-सेना की रीढ़ ऐसे ही लोगों से बन सकती है, जिन्होंने क्रांति-वेदी पर अपना जीवन-समर्पण कर दिया हो। मेरे जीवन-समर्पण के पीछे यह प्रेरणा भी थी कि इस प्रकार के जीवन-समर्पण को एक नया आह्वान किया जाय।

समाजवादी क्षेत्रों तथा देश के दूसरे क्षेत्रों में भी यह कहा जाता है कि राजनीति से मेरे हटने के कारण राजनीति को और खासकर समाजवादी आन्दोलन को बहुत क्षति पहुँची है।

लोग ऐसा इसलिए समझते हैं कि आज की प्रचलित राजनीति पर ही उनका सारा विश्वास टिका हुआ है। मैंने तो समझ लिया है कि जिस जगह हमें जाना है, जैसा समाज हमें बनाना है, वह आज की राजनीति से हो ही नहीं सकता। यह राजनीति इसमें सहायक हो सकती है, लेकिन इसका असली काम तो गांधी-विनोबा के ढंग से ही हो सकता है। ऐसी स्थिति में मेरे लिए राजनीति का स्थान गौण हो जाता है। यदि जनता भी इस विचार को समझ ले, तो उसकी दृष्टि भी आज जो राजनीतिक पक्षों और राज-केन्द्रों की ओर लगी है, वहाँ से हट जायगी और वह स्वयं पर भरोसा करने लगेगी। ऐसी हालत में राजनीति के पीछे जनता नहीं, बल्कि जनता के पीछे राजनीति भागेगी। जन-शक्ति का निर्माण होगा, जन-क्रांति जगेगी और नये समाज का निर्माण गाँव-गाँव, घर-घर से, बल्कि व्यक्ति-व्यक्ति से शुरू होगा।

कुछ लोग समझते हैं कि मेरे इस कदम से समाजवाद की शक्ति क्षीण होगी। लेकिन उसका तो सवाल ही नहीं उठता। सन् '५७ में अगले चुनाव होंगे। उस समय तक यदि भूदान क्रांति सफल हो जाती है, पाँच करोड़ एकड़ जमीन मिल जाती है, हजारों गाँवों में जमीन का ग्रामीकरण हो जाता है, नये समाज के नये विचार, नयी सभ्यता के नये-मूल्य वातावरण में व्याप्त हो जाते हैं, तो अगले चुनाव में समाजवाद की बड़ी से बड़ी जीत इसके सामने फीकी पड़ जानेवाली है। चुनाव की जीत तो केवल राजनैतिक होगी, लेकिन भूदान-आन्दोलन की सफलता प्रत्यक्ष समाजवाद की क्रांति होगी। इस क्रांति से समाजवाद

की इतनी शक्ति बढ़ेगी कि जितनी समाजवादी पक्ष के दायरे में सीमित रहकर किसी प्रकार भी बढ़ना संभव नहीं है।

दुःख का विषय है कि यह विचार अभी राजनीतिक पक्षों ने समझा नहीं है। चाहे वे समाजवादी पक्ष के हों, चाहे कांग्रेस पक्ष के हों अथवा किसी दूसरे पक्ष के ही क्यों न हों। उन्हें यह नया विचार, नयी क्रांति नजदीक से और गहराई से समझनी चाहिए, ऐसा मेरा नम्र निवेदन है।

—जयप्रकाश नारायण

जीवनदान की गंगोत्री

मैं आपके सामने कुछ अनिच्छा से बोलने आया हूँ। आना इसलिए पड़ा कि बोलने का हुक्म हुआ है; और मैंने सोचा कि न बोलने से कुछ भ्रम हो सकता है। अनिच्छा इसलिए थी कि कुछ बातों से मन जरा दुखी हुआ है।

बिहारवासी होने के नाते मैं अत्यन्त लज्जित होकर आपके सामने आया हूँ। बिहार ने बत्तीस लाख एकड़ भूमि प्राप्त करने का संकल्प किया था। हम लोगों ने बाबा को अठारह महीने तक कष्ट दिया, बिहार के गाँव-गाँव में उन्हें घुमाया, जब कि वे दूसरी जगह बड़े-बड़े काम कर सकते थे। यह हमारा सौभाग्य है कि उनके साथ रहने का हमें मौका मिला। परन्तु जिस कारण यह हुआ है, उस पर हम गौरव कदापि महसूस नहीं कर सकते। यह बत्तीस लाख एकड़ का जो संकल्प था, वह ऐसा कौन-सा

बड़ा संकल्प था, जो पूरा नहीं हो सकता था ? यहाँ की प्रान्तीय काँग्रेस कमेटी ने संकल्प करके उसे अपना लिया था और यहाँ की प्रजा-समाजवादी पार्टी ने भी इस आन्दोलन का समर्थन किया था। इन दोनों पक्षों के पास कार्यकर्ताओं का अपार बल है। कार्यकर्ताओं की कोई कमी नहीं है। पर इतना होने पर भी क्या कारण है कि हम यह संकल्प पूरा न कर सके ? हजारीबाग जिले को छोड़कर दूसरे किसी भी जिले का कोटा पूरा नहीं हुआ है। वहाँ भी पड़ती जमीन अधिक है, इसलिए कुछ ज्यादा जमीन प्राप्त हुई है। इसके क्या कारण हैं, इस पर सोचना चाहिए। बिहार का ही नहीं, सारे देश का यह प्रश्न है।

कानून की असमर्थता

पिछले कुछ महीनों का इस आन्दोलन का मेरा जो अनुभव है, उससे मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूँ कि जिस श्रद्धा से मैं इस आन्दोलन में आया, वह श्रद्धा दिन-प्रतिदिन दृढ़ होती जा रही है। आज देश में विवाद चलता है कि इस आन्दोलन से समस्या हल होगी या नहीं, तो बाबा विनोद में कह देते हैं कि समस्या हल होने के पहले कहीं मेरी ही समस्या हल न हो जाय। लेकिन अपने प्रत्यक्ष अनुभव से मैं इस नतीजे पर आया हूँ कि केवल भूमि की ही नहीं, बल्कि जीवन और समाज की सारी समस्याएँ हल करने की शक्ति इस प्रक्रिया में है। हमारे कुछ मित्र-सुहृद्, जो यहाँ पर आये हैं, वे कहते हैं कि यह सवाल तो कानून से ही हल हो सकता है। इस मान्यता पर सब लोग एक ही स्थान पर खड़े हैं। काँग्रेसवाले, प्रजा-समाजवादी, कम्युनिस्ट, सब कहते हैं

कि यह समस्या तो कानून से ही हल होगी, बाबा तो केवल हवा तैयार कर रहे हैं। लेकिन मेरा यह खयाल है कि कानून इस समस्या के सामने अपने को अशक्त पायेगा। कानून के जरिये यह समस्या हल नहीं हो सकती। जमीन के बँटवारे का सवाल तो कानून के जरिये हल हो सकता है, परन्तु इसमें कई जटिल प्रश्न ऐसे हैं, जिनका उत्तर कानून नहीं दे सकता। कानून से जमीन का बँटवारा भले ही हो जाय, परन्तु क्या जमीन के बँटवारे के लिए ही यह आन्दोलन हो रहा है? जो कार्यकर्ता हैं, वे जानते हैं कि यह आन्दोलन तो गहराई में जाने के लिए हो रहा है। सारे जीवन को पलटने के लिए यह आन्दोलन हो रहा है। क्या कानून कभी यह सिखा सकता है कि अमुक पर प्रेम करो? और कानून के कारण क्या कोई प्रेम करता है? क्या कानून कभी यह भी सिखा सकता है कि अच्छे वनो और क्या कोई कानून के कारण अच्छा वन भी सकता है? क्या कानून से छुआछूत की समस्या हल हुई है या आज छोटी-छोटी वच्चियों की जो शादियाँ हो रही हैं, उनको उससे हल किया जा सका है? यह तो सब जन-शक्ति से, जनता का विचार बदलने से ही हो सकता है। यदि उसके पीछे जनता की सम्मति न हो, तो कानून पंगु बन जाता है।

हमारा अन्तिम ध्येय यह है कि गाँव की सारी भूमि सबकी बने। उस पर सारे गाँव का स्वामित्व रहे। सारा गाँव उसका मालिक बने। क्या यह सारा कानून से हो सकता है? किस दल में यह शक्ति है कि वह कानून से यह सब करा ले? कानून बनानेवाले में एक शक्ति तलवार की भी होती-

है; परन्तु तलवार से एक समस्या हल होती हुई दिखाई देती हो, तो दूसरी दस समस्याएँ खड़ी होती हैं। अतः तलवार का भी काम यहाँ पर चलनेवाला नहीं है। उससे यह काम हर्गिज नहीं हो सकता है। यह काम तो उसी पद्धति से हो सकता है, जैसे आज हो रहा है। दूसरी किसी भी पद्धति से वह नहीं हो सकता।

मेरा दुःख

बहुत दुःख के साथ यह कहना पड़ता है कि हम एक पक्ष में हैं, इसलिए काँप्रेसवालों के और हमारे बीच एक दीवार खड़ी हुई है। इसमें मेरा दोष हो सकता है, परन्तु चाहे जितनी कोशिश करने पर भी मालूम होता है कि यह दीवार तो है ही। समाजवादियों ने भी इस आन्दोलन का समर्थन किया है। परन्तु मैं देखता हूँ कि जब मैं घूमता हूँ, तब तो हमारे साथी लोगों में जरा कुछ हलचल पैदा होती है और वे दौड़-धूप करने लग जाते हैं, लेकिन जहाँ मेरा दौरा खतम हो जाता है, वहाँ वे घर में चले जाते हैं और ठंडे पड़ जाते हैं। मैंने उनको यह कहते भी सुना है कि “जयप्रकाश तो अब गांधीवादी, सुधारवादी बन गया है। वह अब क्रान्तिकारी नहीं रहा है। क्या कभी दान माँगकर जमीन का मसला हल हो सकता है?” यह सुनकर दुःख होता है। बाबा ने भी कई दफा इस बारे में कहा है, पर अब तो उन्होंने वह कहना भी छोड़ दिया है। जब कोई देखता है कि उसके कहने से कोई परिणाम नहीं होता है, तो कहना छोड़ देता है। बाबा कहते थे कि “यह कैसी सेना

है कि जिसका सेनापति तो आगे बढ़े और सेना पीछे ही रहे ! ”

अगर दोनों पक्ष जुट जाते !

बिहार में कांग्रेस और समाजवादी, दोनों पक्षों में काफी कार्यकर्ता हैं। रचनात्मक कार्यकर्ताओं की बात तो मैं नहीं करता, क्योंकि वे लगन और सातत्य से यह कार्य कर रहे हैं। परन्तु यदि कांग्रेस और प्रजा-समाजवादी दल के कार्यकर्ता इस काम में जुट जाते, तो वे इतना काम कर पाते कि जो कानून से दस वर्षों में भी नहीं हो पाता। तब तो बत्तीस लाख एकड़ का कोटा जरूर पूरा हो जाता। लेकिन बाबा गया में एक बार, दो बार, तीन बार आये और अब चौथी बार आये हैं। मैं भी यहाँ तीन बार यात्रा कर चुका हूँ। तो हर बार यही अनुभव आता है कि हमारे दौरे के समय, या अनुग्रह बाबू, कृष्णवल्लभ बाबू, श्रीबाबू, इनमें से किसीका भी दौरा हो, तो लोग दौड़-धूप करते हैं, दानपत्र इकट्ठा करते हैं और दौरा खतम होने के बाद फिर से ठंडक हो जाती है। एक बार ज्वार उठे और गिर जाय, तो उसे फिर से ऊपर उठाना कठिन हो जाता है।

आत्मसंशोधन का क्षण

१९५२ के दिसम्बर महीने में मेरा गया में पहला दौरा हुआ था। उस समय जो छह हजार एकड़ के दान जाहिर हुए थे, उनमें से अभी तक तीन हजार एकड़ के दानपत्र भी प्राप्त नहीं

हुए हैं। जमीन मांगी हुई है, मिली हुई है, सिर्फ दान-पत्र भरवाना बाकी है। लेकिन यह भी अब तक नहीं हुआ है। इसका दोष किसे दें? दान देनेवाले का दोष नहीं है, दोष तो हमारा है। इसका मतलब यह नहीं कि दान माँगने पर हमेशा वह मिल ही जाता है। कभी-कभी हम छठा हिस्सा माँगते हैं, तो देने-वाला बीसवाँ हिस्सा देने के लिए तैयार होता है। और कभी-कभी मजबूर होकर हमारे कार्यकर्ता उसे स्वीकार भी कर लेते हैं। माँगने पर हर कोई छठा हिस्सा ही देता है, यह बात तो नहीं है। कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि उसकी वजह से हमारा दिल ही टूट जाता है। इन सब बातों के होते हुए भी मैं ढिठाई से कहना चाहता हूँ कि अगर हम लोगों ने निरंतर काम किया होता, तो आज हम गौरव के साथ एलान कर सकते थे कि वत्तीस लाख अच्छी जमीन और बीस-पचीस लाख दूसरी जमीन प्राप्त हुई है। गया में काफी शक्ति लगी और यहाँ पर काफी जमीन मिली। क्या गया जिले के लोग अच्छे दानी हैं और पटना, शाहाबाद, मुँगेर आदि जिले के लोग कुछ कम दानी हैं? ऐसी बात नहीं, लोग तो हर जगह एक-से होते हैं। हर जगह कंजूस भी होते हैं और दानी भी होते हैं। तो भी गया जिले में ज्यादा काम हुआ और दूसरे जिलों में नहीं हुआ, इसका कारण यही है कि हमने काम नहीं किया। आप सब लोग हजारों की तादाद में यहाँ पर आये हुए हैं। आप अपनी छाती पर हाथ रखकर अपने मन से पूछिये कि चांडिल-सम्मेलन को कितने महीने बीते? इन दिनों में आपने भूदान के काम के लिए कितना समय दिया और कितनी लगन से आपने काम किया? अगर

आगे भी ऐसा ही काम करोगे, तो फिर काम पूरा होने की क्या आशा रखी जा सकती है ?

पक्षवालों से

आज हमारे सामने सबसे बड़ा प्रश्न यही है कि कार्यकर्ता उत्साह और लगन से काम कैसे करें ? यहाँ पर जो भिन्न-भिन्न राजनैतिक पक्ष हैं, उनके पास कार्यकर्ता भी हैं। पर उनके अपने कार्य भी होते हैं और भूमिहीनों को सीधे भूमि देने का यह प्रत्यक्ष काम न करके असेम्बली और पार्लियामेंट में जाकर और वहाँ कानून बनाकर, द्राविड़ी प्राणायाम करके गरीबों को भूमि देने का काम करने का ही वे सोचते हैं। परन्तु हम तो आज प्रत्यक्षतः वही काम भूदान के द्वारा कर सकते हैं। जैसे तलवार से प्रत्यक्ष काम होता है, उसी तरह बिना तलवार के, बिना कानून के, जमीन माँगकर लाखों-करोड़ों भूमिहीनों को जमीन देना कम महत्त्व की बात नहीं है। परन्तु पक्षवाले लोग इस बात को नहीं समझते हैं और जो भगड़े चलते हैं, उन्हींको ये अधिक महत्त्व देते हैं। यह दुर्भाग्य की बात है। मैं आशा करता हूँ कि धीरे-धीरे हमारा दिमाग बदलेगा और राजनैतिक पक्षों के लोग इस आन्दोलन में आयेंगे। जैसे-जैसे इसके क्रान्तिकारी और मंगल स्वरूप का दर्शन होता जायगा, वैसे-वैसे हम लोग आते जायेंगे। परन्तु यहाँ से हम सब यह समझकर अपनी जगह जायँ कि जिन पक्षों के लोगों ने इसका समर्थन किया है, अगर लगन से काम नहीं करेंगे, तो वे अपने को ही धोखा देंगे।

पक्षों की दृष्टि छोड़ें

पक्षों के लोग भूदान का काम इस दृष्टि से न करें कि इससे उनके पक्ष की प्रतिष्ठा बढ़ती है; बल्कि इस दृष्टि से करें कि इससे प्रत्यक्ष रूप से गरीबों को भूमि मिलती है। प्रत्यक्ष गरीबों को भूमि मिल जाती है, इसीमें क्या सबकी प्रतिष्ठा नहीं आती है? हमें इस काम से कोई नेतागिरी तो नहीं करनी है। इससे कोई असेम्बली या पार्लियामेंट की सीट मिलेगी, अपने पक्ष का हित सधेगा, इस दृष्टि से भी काम नहीं करना चाहिए। बल्कि हमें तो इस आन्दोलन के ऊँचे आदर्शों को सामने रखकर, इसके बुनियादी उसूल ध्यान में रखते हुए पक्ष-रहित भाव से ही यह काम करना चाहिए।

युग का तकाजा

जब हम कहते हैं कि तेजी से काम करना चाहिए, तो कुछ लोग आक्षेप उठाते हैं कि इधर तो आप हृदय-परिवर्तन की बात करते हो और उधर कहते हो कि तेजी से काम करो, तो इन दो बातों में कैसे मेल बैठता है? लेकिन जमाना है, जो हमें आवाहन कर रहा है कि तेजी से काम करो, नहीं तो आपके पीछे जो लोग खड़े हैं, वे आपकी छाती पर चढ़कर आगे बढ़ेंगे। उनके हाथ में तलवार है। इसलिए अहिंसा के लिए बहुत कम समय बचा है। इतिहास यह राह नहीं देखेगा कि भारत में एक संत अहिंसा का प्रयोग कर रहा है, तो जल्दी नहीं करनी चाहिए।

जीवन-दान !

तो कार्यकर्ताओं की संख्या कैसे बढ़े, इस प्रश्न पर हमें सोचना है। किस तरीके से नये कार्यकर्ता इस तरफ खींचे जा सकते हैं, इस पर सोचना है। जिस आन्दोलन में नये कार्यकर्ता खींचने की शक्ति नहीं होती है, उसमें आन्तरिक शक्ति नहीं है, ऐसा कहना पड़ेगा। परन्तु हम कहते हैं कि इस आन्दोलन में तो बड़ी शक्ति है। पिछले साल चांडिल-सर्वोदय-सम्मेलन में जो प्रस्ताव पेश किया गया था, उसमें तरुणों से और खासकर विद्यार्थियों से अपील की गयी थी कि कम-से-कम एक साल का समय भूदान-यज्ञ के लिए दीजिये। अब हमें सोचना है कि क्या इस तरह एक साल या पाँच साल देने से काम चलेगा? इसमें तो जीवन-दान ही देना होगा। ऐसे जीवन-दानी कार्यकर्ताओं का आवाहन इस सम्मेलन से होना चाहिए। मैं ऐसे कार्यकर्ताओं को आवाहन करता हूँ; यद्यपि आज मेरी वाणी बहुत शिथिल है। चांडिल-सम्मेलन के बाद अखबारों में रिपोर्ट आयी थी कि जयप्रकाश ने पार्टी छोड़कर एक साल तक भूदान का काम करने का निश्चय किया है। उस समय मैंने वैसा कुछ नहीं कहा था। एक साल, दो साल देने की कोई बात मैंने नहीं कही थी। लेकिन आज मैं यह कह रहा हूँ कि मुझे भी यह सौभाग्य प्राप्त है कि मेरा नाम उन जीवन-दानी कार्यकर्ताओं में शामिल है।

—जयप्रकाश नारायण

आशीर्वाद

अभी हम लोगों ने एक व्याख्यान सुना, जिसमें हृदय बोल रहा था। मुझे रुक्मिणी की पत्रिका का स्मरण हुआ। रुक्मिणी ने भगवान् श्रीकृष्ण को एक पत्रिका लिखी थी। उसमें रुक्मिणी भगवान् को लिखती है: “चाहे मुझे सौ जन्म लेने पड़ें, तो भी मैं लूंगी और प्राणों का परित्याग करती रहूँगी, शरीर को कृश करती हुई; लेकिन तुझको ही वरूँगी।” हृदय को बहुत सुख होता है, ऐसे मंगल निश्चय का वाक्य सुनकर। मैंने तो माना है कि यह यज्ञ सफल होते-होते हमारे जीवनो को ही सफल बनायेगा।

आज की राजनीति की छोटी निगाह

आप लोग जानते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण एक बड़े राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने गीता में कह रखा है कि हममें सत्कार्य करते हुए अपने लिए उससे कोई लाभ पाने की या दूसरे किसी तरह से कोई स्वार्थ साधने की वृत्ति नहीं होनी चाहिए। पर इन दिनों के छोटे-छोटे राजनीतिज्ञ हमें सुनाते हैं कि राजनीति में यह विचार नहीं चलता है, राजनीति में तो जो भी कोई छोटा-मोटा सत्कार्य किया जाय, उससे पूरा फल पाने की कोशिश करनी चाहिए। जैसे कोई दुग्ध-प्रेमी गाय को दुहते हैं, तो आखिरी बूंद तक दुहते हैं, वैसे ही हमें भी करना चाहिए। हमारा जो भी सत्कार्य होगा, उसका हमें पूरा-पूरा लाभ उठाना है। आज के राजनीतिज्ञ ऐसी बात कहते हैं, पर जिनकी वाणी से गीता निकली, वे भी तो बड़े राजनीतिज्ञ थे। मैंने भिन्न-भिन्न पक्षों के नेताओं को और

सेवकों को बहुत समझाने की कोशिश की है कि छोटी नजर से मत देखियेगा, कुछ दीर्घ दृष्टि से सोचियेगा और इस काम में अपने लिए या अपना जो माना हुआ पक्ष है, उसके लिए कोई लाभ उठाने की नीयत मत रखियेगा। इस तरह समझाने की मैंने बहुत कोशिश की है। कुछ नेताओं से मैंने एकांत में बात भी की है और मुझे कृतज्ञतापूर्वक कबूल करना चाहिए कि उन्होंने मेरी बात बहुत गौर से सुनी और वे कबूल भी करते हैं कि वह बात ठीक है। परन्तु वे कहते हैं कि हमें कुछ आदत हो गयी है और उस आदत के कारण पुराने ढंग से काम हो जाता है। ऐसे जो भी लोग हैं, मेरे मन में उनके लिए करुणा है। मैं उन्हें दोष नहीं देता।

रचनात्मक कार्यकर्ताओं से

पर जब मैं देखता हूँ कि हमारे जो रचनात्मक काम करने-वाले कार्यकर्ता हैं, उनके बीच भी छोटे-छोटे अहंकार काम करते हैं, एक-दूसरे के विषय में शंकाशीलता बनी रहती है, दूरी भाव होता है, तब मुझे उसका दुःख होता है। मैं मानता हूँ कि हम लोग, जो गांधीजी के नाम पर काम करते हैं, रचनात्मक काम को जिन्होंने अपना स्वधर्म माना है, वे अगर सब अहंकार छोड़कर परिशुद्ध भाव से काम करें, तो जिन्हें हर चीज में कोई-न-कोई लाभ उठाने की आदत हो गयी है, वे लोग भी धीरे-धीरे अपनी आदत को छोड़ेंगे और शुद्ध भावना से काम करेंगे। इसलिए इस विषय में मैं निराश नहीं हूँ। हमें शुभ संकल्प करना चाहिए।

जयप्रकाश का अनुकरण करें

दीख तो यह रहा है कि इस एक काम से बहुत से दूसरे काम करने का मौका सहज ही मिलनेवाला है। उस दिन मैंने कहा था कि मुझे मालूम नहीं कि भूदान-यज्ञ हमें कहाँ से कहाँ ले जायगा। किन-किन कामों की प्रेरणा देगा, कितना विशाल उद्योग यह हमसे करायेगा, इसकी कल्पना आज नहीं की जा सकती। परन्तु मैं फिर से परमेश्वर को साक्ष्य रखकर आप सब लोगों के सामने अपनी प्रतिज्ञा दुहराता हूँ। इस काम में हमें काया, वाचा, मन और बुद्धि, सब लगा देनी है। कार्यकर्ता भी हमें बहुत-बहुत मिलनेवाले हैं। आज एक संकल्प प्रकट हुआ है। उस कारण जो भान हुआ है—आत्मा की शक्ति का; वह हमारे लिए बड़ी भारी धाती है। एक बड़ी कमाई हासिल हुई है। दीख पड़ेगा कि जवानों को गये साल जो आवाहन किया गया था, उसका परिणाम इसके आगे बहुत वेग से सामने आयगा। वह परिणाम प्रत्यक्ष दिखेगा। मैं चाहता हूँ कि हम सब लोग ऐसे ही दृढ़-संकल्पी बनें, जैसे जयप्रकाश बाबू हुए हैं।

—विनोबा

जीवन-समर्पण

[दो ऐतिहासिक पत्र]

(१)

[सम्मेलन की अध्यक्षता श्री आशा बहन को लिखा हुआ पत्र]

प्रिय आशा बहन,

बाबा का एक पत्र आया है, जो साथ भेज रहा हूँ। जिन्होंने हम सबको प्रेरित किया है, वे ही मुझ जैसे नाचीज को जीवन-दान करें, इस पर कुछ कहा नहीं जाता। इतना ही कहूँगा कि इस अमूल्य दान को स्वीकार कर सकूँ, इसके लिए सर्वथा अयोग्य हूँ। हमें तो जीवन-दान, भगवान् के नाम पर, बाबा को ही करना है। सर्वोदयपुरी, (बोधगया)

आपका विनीत

२०-४-५४

जयप्रकाश

(२)

[श्री विनोबा का पत्र]

श्री जयप्रकाश,

कल आपने जो आवाहन किया था; उसके जवाब में—

भूदान यज्ञ-मूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान :

अहिंसक क्रान्ति के लिए

मेरा जीवन समर्पण।

सर्वोदयपुरी, (बोधगया)

—विनोबा

२० अप्रैल, १९५४

जीवनशुद्धि का संकल्प

(१)

जब जयप्रकाश बाबू ने बड़े प्रेम से, विनय से, सद्भाव से, हम लोगों के सामने जीवन-दान की बात रखी, तो मैं पिघल गया। सुबह उठते ही मैं सोचने लगा कि मुझे भी इसमें कुछ करना चाहिए। मैंने पत्र लिखा—‘भूदानयज्ञ-मूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति के लिए मेरा जीवन समर्पण।’

इसमें कोई नयी बात तो मैंने नहीं की, पर अपना एक पूरा साध्य मैंने शब्दों में रख दिया—लिख दिया। केवल इन शब्दों में मैंने अपनी प्रतिज्ञा आप लोगों के सामने दुहरायी। जैसे दार्शनिकों को बिना शब्द-सिद्धि के समाधान नहीं होता, वैसी ही मेरी हालत है। इसलिए ठीक शब्द सोचने में कुछ समय लग गया। इसमें जो चन्द शब्द रखे हैं, उन पर भाष्य लिखा जा सकता है।

इस तरह एक प्रकार से कहा जा सकता है कि इस लिखने में मेरे लिए कोई नयी चीज नहीं। लेकिन खुद इसमें बहुत ही नयी चीज थी, जिसका इशारा हमारे मित्र आचार्य कृपालानी ने गत १९ अप्रैल, १९५४ को सर्वोदयपुरी के अपने सायंकालीन प्रवचन में किया। उन्होंने बड़े ही सूचक और अहिंसात्मक ढंग से सुझाया कि ‘भाई, जीवन-दान तो करते हो, लेकिन इसका खयाल रखो कि गन्दी चीज तो अर्पण नहीं करते। अगर शुद्ध वस्तु अर्पण करनी है, तब तो जीवन-दान का विचार अच्छा है।’ फिर भी ध्यान रहे कि जो जीवन-दान का विचार और संकल्प

करेगा, वह कचरे का दान तो नहीं कर सकता। इस वास्ते उस संकल्प का अर्थ भी जीवन-शुद्धि का ही संकल्प होता है।

कुछ लोगों को आचार्य कृपलानी का यह कहना मजाक ही लगा। पर बात ऐसी नहीं है। वह एक हृदय की और समझने की बात है। जो साहित्यिक और कला-रसिक होते हैं, वे अपनी बात ऐसे ढंग से रखते हैं कि उसमें कोई उपदेश दिया तो किसीको उसका आभास भी नहीं आ पाता, फिर भी उपदेश की पूर्ति हो जाती है।

हम-आपने परस्पर के समक्ष एक-दूसरों को साक्षी रखकर जीवन-अर्पण की जो प्रतिज्ञा की, वह जीवन-शुद्धि की भी प्रतिज्ञा है। और यही हमारे लिए विशेष बात हो जाती है। हमने अपना जीवन अब तक इस काम में और इसी तरह के दूसरे सार्वजनिक कामों में लगाया—ऐसा ही कहा जायगा। मेरे लिए तो जरूर ही कहा जायगा कि मैंने सिवा सार्वजनिक सेवा के कोई काम किया ही नहीं है। फिर भी भूदान-यज्ञ-आन्दोलन जैसे एक बिल्कुल ही बुनियादी आन्दोलन के लिए, जिसमें काया पलटने का माद्दा है, जब हम जीवन-दान करते हैं, तो अभी तक चित्त-शुद्धि का जितना खयाल हमने रखा, उससे बहुत ज्यादा चित्त-शुद्धि का खयाल रखने की जरूरत है। इसीलिए इसमें हमारे लिए नयी चीज है।

भगवान् शंकराचार्य ने लिखा है कि 'भिक्षा में जो मिले, वही खाना चाहिए।' वे उसकी खूबी बताते थे कि 'भिक्षा एक बड़ी साधना है, कारण कोई भिक्षा न दे तो उससे सुख होता है या दुख? और अगर कोई भिक्षा दे तो उसका चित्त

पर क्या असर होता है ?—यह भिक्षा माँगनेवाले को रोज देखने को मिलता है।' अच्छी भिक्षा मिली, तो क्या भावना हुई और रही मिली या कुछ भी न मिली तो क्या भावना हुई ? आदर के साथ मिली तो क्या और अनादर के साथ मिली तो क्या भावना हुई ? मानो रोज का खाना—वह भिक्षा माँगना, लेबोरेटरी (प्रयोगशाला) का एक प्रयोग ही हुआ। भिक्षा से यह देखने का मौका मिलता है कि उससे चित्त पर कैसा असर होता है ? इस तरह विश्लेषण कर उन्होंने कहा है कि संन्यासी के लिए बड़ा ही शुभप्रद कार्य-क्रम है।

इसी भिक्षा का कार्य-क्रम हमारे पास है। हम जमीन माँगने जाते हैं तो कोई उसे देता है, तो कोई गाली भी सुनाता है, कोई आदर करता है तो कोई अनादर भी, कोई कम देता है, कोई ज्यादा तो कोई ठगने की भी नीयत रखता है। प्रकृति में ऐसी पचासों प्रकार की वासनाएँ, भावनाएँ पायी जाती हैं। लेकिन हमारे मन में यह दृढ़ निश्चय रहा कि 'ये सारी भावनाएँ आत्मा में कतई नहीं' तो हम बावजूद ऐसे अनुभवों के शान्त, अविचल ही रहेंगे। हमारी वाणी से कोई बेजा बात नहीं निकलेगी, अविनय का शब्द नहीं निकलेगा।

रोज भिक्षा माँगने का यह धंधा जिन्होंने शुरू कर दिया, उन्हें अगर हर्ष, शोक आदि प्रसंगों का रोज अनुभव आयगा, तो स्पष्ट है कि आत्म-परीक्षण के लिए भी उन्हें रोज मौका मिलेगा। यह हमारे लिए बड़ा उपयोगी कार्यक्रम है और इसमें ऐसे आत्म-शोधन की बहुत जरूरत है। इस दृष्टि से जिन्होंने जीवन-

दान दिया—यद्यपि उनमें कुछ लोग ऐसे जरूर हैं जो पहले से ही काम करते और बरसों से काम करते हैं, और कुछ नये भी हैं, फिर भी—उनमें जो पुराने हैं, उनके लिए भी यह प्रतिज्ञा नयी प्रतिज्ञा हो जाती है।

सर्वोदय सम्मेलन, बोधगया

—विनोबा

२० अप्रैल, १९५४

(२)

जीवन-दान का आन्दोलन उठाकर हमने अभी जीवन-शुद्धि की साधना में पहला ही कदम बढ़ाया है। अभी तो हमें बहुत दूर जाना है। हमें अहंकारशून्य होकर काम करना होगा। जीवन-दान देकर भी जो अपने को किसी विशिष्ट जाति के समझें और कहें कि 'हम तो जीवन-दानी हैं', तो उनका यह कहना अहंकार ही होगा। जीवन-दान का गर्व भी नहीं होना चाहिए। पहले भी ऐसे लोग थे, जिन्होंने अपना सारा जीवन भूदान-यज्ञ के कार्य में देने का संकल्प किया था। इसलिए अब हम लोगों ने जो जीवन-दान दिया, उस पर अहंकार करने का हमें कोई अधिकार नहीं है। अहंकार-रहित होकर हम इस बात को समझें कि हम जो कर रहे हैं, ईश्वर को अर्पित कर रहे हैं। वास्तव में हम उसकी वस्तु उसीको सौंप रहे हैं। उसीकी पूजा में जीवन लगाने का हमने निश्चय किया है, इस वृत्ति से कार्य करना होगा। रास्ते में बाधाएँ आयँगी, तकलीफें आयँगी, प्रलोभन भी आयँगे, पर उनसे हमारी परीक्षा ही होगी।

एक बात मैं आपसे अवश्य निवेदन करना चाहता हूँ। आपने जब अपना सारा जीवन इस पुण्य-कार्य में लगाने का निश्चय

किया है, तो उसके फलस्वरूप कोई ज्यादा या कोई बड़ी वस्तु आपको मिल सकती है, ऐसी धारणा या विचार आपके मन में नहीं उठना चाहिए। जिन्होंने जीवन-दान दिया है, उनका किसी चुनाव में भाग लेना, किसी पद की लालसा रखना या पैसे कमाने की इच्छा रखना कोई अर्थ नहीं रखता। जीवन-दानियों में ऐसे जो लोग हैं, जिनका राजनीति से सम्बन्ध है, और जो किसी पक्ष के सदस्य हैं, उनके बारे में मेरा तो विचार है कि वे सदस्यमात्र ही रहें, और अपने पक्ष के चुनाव में भी वे भाग न लें। उन्हें जीवन भर के लिए हर प्रकार के चुनाव से अलग रहना चाहिए और यह सब भी हमें इस भाव से नहीं करना चाहिए कि हम कोई त्याग कर रहे हैं। बल्कि इस भाव से करना चाहिए कि जो काम हम कर रहे हैं, वह एक महान् काम है और ऐसा काम करने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसलिए हम इसीमें आत्म-सन्तोष मानें।

सर्वोदय सम्मेलन, बोधगया
२० अप्रैल, '५४

—जयप्रकाश नारायण

जीवनदान क्यों ?

: २ :

बोधगया-सर्वोदय-सम्मेलन एक नये आन्दोलन के आरंभ के कारण उल्लेखनीय हुआ। वह आन्दोलन है—‘जीवन-दान’। जब से विनोबाजी ने भूदान-आन्दोलन शुरू किया, तब से उसमें से साधन-दान, सम्पत्ति-दान, बुद्धि-दान, श्रम-दान, प्रेम-दान आदि अनेक शाखा-प्रशाखाएँ निकलीं। मूल आन्दोलन के ये सब स्वाभाविक विकास ही थे। बल्कि यह कहना चाहिए कि ये सब आरम्भ ही से भूदान-आन्दोलन में निहित और अन्तर्भूत थे। इसी प्रकार जीवन-दान भी उसीमें निहित था और जब कि परिस्थिति परिपक्व हुई और उसकी आकांक्षा पैदा हुई, तब वह अंकुरित हुआ। सच तो यह है कि ऐसी स्थिति पैदा हो गयी थी कि आन्दोलन को अनुप्राणित करने के लिए जीवन-दान का उदय न होता तो शायद, वह आन्दोलन उन्नत भूमिका पर नहीं पहुँचता।

आन्दोलन की इस प्रगति में थोड़ा हाथ मेरा भी रहा है। इसलिए मैं संक्षेप में उसे समझाना चाहता हूँ। इधर जो आलोचनाएँ निकली हैं, उनसे मालूम होता है कि जीवन-दान आन्दोलन को लोगों ने भलीभाँति समझा नहीं है। मेरे अपने विषय में व्यक्तिगत सफाई देने की बहुत कोई बात नहीं है और न उसकी जरूरत ही है। इतना कह देना काफी होगा कि मैंने जो निर्णय

किया वह उस क्षण के आवेश में नहीं किया। महीनों पहले से धीरे-धीरे मैं उसकी तरफ प्रेरित हो रहा था। और न यही समझना चाहिए कि उस कदम को उठाकर मैंने उन सब आदर्शों को तिलांजलि दे दी, जिन पर मैं चिरकाल से स्थिर था। बल्कि इस कदम का मतलब यह है कि मुझे यह महसूस हो गया कि मेरे आदर्शों की सिद्धि और संरक्षण भूदान अथवा गांधीजी के मार्ग से अधिक अच्छी तरह हो सकता है।

जीवन-दान का आशय

जीवन-दान का सम्पूर्ण आशय क्या है? किसी एक महान् कार्य के लिए अपना जीवन समर्पित कर देना कोई नयी बात नहीं है। बोधगया में जिन्होंने जीवन-दान की घोषणा की, उनमें से भी कई ऐसे हैं, जिनका जीवन पहले से ही समर्पित है। क्या उनके लिए पुनः समर्पण की आवश्यकता थी? और फिर इस तरह जीवन-समर्पण करनेवाले के लिए राजनीति से अलग रहना क्यों जरूरी समझा गया? ये और इस तरह के और भी सवाल उठते रहते हैं। मैं उनका जवाब देने की कोशिश करूंगा।

सबसे पहली बात यह है कि किसी सत्कार्य के लिए जीवन उत्सर्ग करने से 'जीवन-दान' करना कोई भिन्न वस्तु नहीं है। किन्तु यहाँ जीवन-दान शब्द का प्रयोग एक कार्यविशेष को जीवन अर्पित करने के अर्थ में किया गया है। पर यह समर्पण सिर्फ भूदान के लिए नहीं, जैसा कि अक्सर बतलाया जाता है, बल्कि भूदान में जिन-जिन बातों का समावेश होता है, उन सब

वातों के लिए है। बोधगया में जो लोग इकट्ठे हुए थे, उनमें से करीब-करीब सभी किसी-न-किसी अर्थ में जीवन-दानी थे। याने राजनीति, खादी-ग्रामोद्योग, नयी तालीम, अछूतोद्धार, धर्म या अन्य किसी कार्य को अपना जीवन दे चुके थे। जब उनमें से कुछ लोगों ने मेरे आवाहन के उत्तर में अपना नाम जीवनदानियों में लिखाया, तो उसका यह मतलब नहीं था कि फिर उसी काम को करते रहने का संकल्प वे दुहरा रहे थे और इस तरह वे अनावश्यक एवं निरर्थक प्रदर्शन कर रहे थे। इसके विपरीत उनके जीवन-दान का यह अर्थ था कि भूदान-आन्दोलन का अब उन्हें इतना स्पष्ट और समग्र दर्शन हुआ है कि वे दूसरे सारे काम, यहाँ तक कि राजनीतिको भी छोड़कर भूदान को अपना जीवन समर्पित करने के लिए प्रेरित हुए।

अहिंसक क्रान्ति का अग्र-चरण—भूदान

इस तरह प्रोत्साहित होने के लायक हम भूदान में क्या देखते हैं? ऊपर-ऊपर से देखनेवालों के लिए तो यह महज भूमि-सुधार का एक आन्दोलन है, जो अधिक से अधिक कानून के लिए जमीन तैयार कर रहा है। पर जिन्होंने गहराई में उतरने की कोशिश की है, उनके लिए यह आन्दोलन बड़ा आशय रखता है। वह एक चौमुखी सामाजिक और मानवीय क्रान्ति का उपक्रम है—मानवीय इस अर्थ में भी कि समाज के साथ-साथ आदमी को बदल देने का इरादा वह रखता है। महात्मा गांधी की अहिंसक क्रान्ति-प्रक्रिया का वह सार्वजनिक रूप से प्रयोग करता है। प्यारेलालजी के शब्दों में 'वह अहिंसक क्रान्ति के लिए व्यूह भेद

करनेवाला अग्रचरण है। और उसके परिणाम बहुत व्यापक होंगे।'

जैसा कि विदित है, गांधीजी की प्रक्रिया मत-परिवर्तन की प्रक्रिया थी। वे न केवल नयी सभ्यता के निर्माण में हिंसा को वर्जित करना चाहते थे, वरन् प्राथमिक साधन के रूप में कानून का भरोसा भी नहीं करना चाहते थे। 'आगा खाँ महल' में उन्होंने प्यारेलालजी से कहा—'जब तक हमारे हाथों में सत्ता नहीं है, तब तक तो विवशता के कारण मत-परिवर्तन हमारा साधन है। लेकिन जब हमें सत्ता प्राप्त हो जायगी, तब मैं चाहूँगा कि मत-परिवर्तन हमारा स्वेच्छा से स्वीकृत साधन हो। कानून से पहले मत-परिवर्तन, यह क्रम होना चाहिए।' अनुनय से हृदय-परिवर्तन, मनःपरिवर्तन, नवीन सामाजिक मूल्यों का निर्माण और उनके अनुरूप लोकमत के वातावरण का निर्माण, जहाँ अनुनय-विनय पर्याप्त सावित न हों, वहाँ अन्याय के साथ असहयोग—ये गांधीजी के अस्त्र थे। उनसे द्विविध प्रयोजन सिद्ध होता था—वे समाज-परिवर्तन करते थे और व्यक्ति-परिवर्तन भी। कानून पहली बात कर सकता है, दूसरी नहीं। कानून से किसी हृदय या मन का परिवर्तन नहीं हुआ है। जबर्दस्ती से कोई व्यक्ति सद्गुणी नहीं हुआ है। गांधीजी की मत-परिवर्तन की प्रक्रिया का आधार उनकी यह श्रद्धा थी कि मनुष्य की उन्नति हो सकती है। इस श्रद्धा का आधार दूसरी एक श्रद्धा थी और वह यह कि सभी मनुष्य, चाहे उनमें बाहरी भेद कितना ही क्यों न हो, बुनियादी तौर से अपने में अच्छे हैं। क्या सबके सब ईश्वर के उसी तेजोमय और दिव्यलोक से नहीं आये हैं, जो कि हमारा परम निधान है?

गांधी-विचार का पुनर्जीवन

आज के समाज को सुधारने के लिए गांधीजी अपनी प्रक्रिया का प्रयोग कैसे करते, यह कौन कह सकता है। किन्तु जैसा कि प्यारेलालजी ने कहा है, 'गांधीजी का विचार आज पुनर्जीवित हुआ है। विनोबा उसका अनुवर्तन कर रहे हैं और उसमें उन्हें आश्चर्यजनक सफलता मिली है। बापू भविष्यवाणी की तरह जिस मूलगामी सामाजिक जाग्रति की चर्चा किया करते थे, उसीका आरंभ आज हम देख रहे हैं।'

इस प्रकार भूदान-यज्ञ व्यापक रूप से मत-परिवर्तन और नये मूल्यों तथा नये वैचारिक वातावरण के निर्माण का एक जन-आन्दोलन है। वह लोगों के चित्त और उनके पारस्परिक व्यवहार में जीवित और तत्काल क्रान्ति पैदा करता है। शोषण और असमानता की पद्धति में वह अभी का अभी परिवर्तन करने के लिए उस पर प्रहार करता है। अपने पास जो है, उसमें दूसरों को शामिल करने की शिक्षा वह मनुष्यों को देता है।

आरंभ भूमि से क्यों ?

इस क्रान्तिकारी प्रक्रिया का आरंभ भूमि के क्षेत्र के बदले दूसरे किसी क्षेत्र में भी हो सकता था। किन्तु यह क्षेत्र सबसे पहले इसलिए लिया गया कि—

- (अ) भूमि उत्पादन का एक मूलभूत साधन है।
- (आ) जमीन की समस्या का हल सबसे जरूरी है।
- (इ) हमारे कृषि-प्रधान देश में अधिकांश जनता का उसके साथ सीधा सम्बन्ध है। किन्तु सबसे बड़ा कारण यह है कि

भूमि के द्वारा इस नयी सामाजिक नीति और आर्थिक विचार का प्रवेश कराना दूसरी किसी भी सम्पत्ति के माध्यम की अपेक्षा कहीं अधिक आसान था।

भूदान-यज्ञ जमीन के बारे में जो कहता है, वह गांधीजी के मत से हमारी सभी प्रकार की सम्पत्तियों के लिए लागू है, जिसमें हमारा ज्ञान और कला-कौशल भी शामिल है।

सारी सम्पत्ति समाज की ही उपज है और समाज के सहयोग के बिना किसी भी तरह का उपार्जन असंभव है। इसलिए हमारे पास जो कुछ है, वह समाज का है। जो कुछ हमारे पास है, उसके हम केवल 'थातीदार' हैं। समाज ने मानो अव्यक्त रूप से हम पर यह जिम्मेदारी सौंपी है कि हम अपनी धरोहर की मुस्तैदी के साथ हिफाजत करें और उसका उपयोग अपने लिए नहीं, बल्कि मनुष्य मात्र के लिए करें। किन्तु जमीन समाज की है, यह बात आसानी से मान ली जाती है, क्योंकि जमीन कुदरत की देन है। परन्तु व्यापार, उद्योग-धन्धों और अन्य व्यवसायों के क्षेत्र में इस तरह का सिद्धान्त सर्वमान्य होना कुछ मुश्किल होता है। लेकिन जब भूदान हमारे पाँच लाख गाँवों में इस विचार का बीजारोपण कर देगा और एक हद तक ही क्यों न हो, जब जमीन के मालिक उस विचार को स्वीकार कर लेंगे, तब दूसरे क्षेत्रों में भी उस विचार के अंकुरित होने और पनपने के लिए वातावरण बन जायगा।

वास्तव में भूदान-यज्ञ-आन्दोलन अब इतनी प्रगति कर चुका है कि बोधगया में सम्पत्ति-दान की तरफ भूदान जितना ही ध्यान देने का जो संकल्प किया गया, वह उचित ही है। इस आर्थिक

क्रान्ति के साथ-साथ पुनर्निर्माण का काम भी हाथ में लेना पड़ेगा।

रचनात्मक काम और कार्यकर्ता

आज भी खादी, ग्रामोद्योग आदि के समान बहुत से रचनात्मक काम हो रहे हैं। किन्तु वर्तमान सामाजिक स्थिति में इन प्रवृत्तियों के कारण कोई रद्दोवदल पैदा नहीं होता। उदाहरण के लिए किसी गाँव में खादी का काम दस-बीस साल से चल रहा होगा और फिर भी ग्रामीण समाज के ढाँचे पर उसका जरा भी असर नहीं पड़ा होगा। इस तरह का रचनात्मक कार्य निष्फल है या अधिक से अधिक कष्ट-निवारण करनेवाला है। गांधीजी की रचनात्मक कार्य की कल्पना ऐसी नहीं थी। वे जो कुछ भी थे, पर सबसे पहले वे क्रान्तिकारी थे। उन्होंने खुद लिखा है—‘कुछ लोगों ने मुझे अपने जमाने का सबसे बड़ा क्रान्तिकारी कहा है। यह गलत हो सकता है, लेकिन मैं अपने आपको एक क्रान्तिकारी मानता हूँ—एक अहिंसक क्रान्तिकारी।’ विनोबा की प्रतिभा ने उस क्रान्तिकारी मार्ग का आविष्कार किया है।

बहुत से रचनात्मक कार्यकर्ता आज भी भूमिदान को एक ऐसा काम समझते हैं, जो समय बचने पर किया जा सकता है या दूसरे कामों के साथ-साथ आनुषंगिक रूप से किया जा सकता है। किन्तु एक गांधीनिष्ठ के लिए, यानी अहिंसक क्रान्तिकारी के लिए, भूदान केवल अनेक रचनात्मक कार्यों में से एक कार्य नहीं है। वह सारे रचनात्मक कार्यों का अधिष्ठान है। भूदान के संदर्भ में रचनात्मक कार्य सृजनात्मक बन जाता है, भूदान के अभाव में

वह एक निर्जीव चेष्टा मात्र रह जाता है। भूदान नित्य-प्रवाहिनी नदी के समान है और रचनात्मक प्रवृत्तियाँ नौकाएँ हैं। पानी की धारा न हो, तो ये किश्तियाँ कीचड़ में फँसकर रुक जाती हैं। नदी उन्हें जिन्दगी और रफ्तार देती है और तब वे यात्रियों को पार लगाती हैं।

राजनीतिज्ञों का रुख

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, अगर बहुत से रचनात्मक कार्यकर्ता भूदान को सिर्फ कई प्रवृत्तियों में से एक समझते हैं, तो अधिकांश राजनीतिज्ञ, बराये मेहरबानी उसे सिर्फ एक ऐसा सदुद्देश्यपूर्ण आन्दोलन समझते हैं, जो यथासमय कानून से अपने उद्देश्यों को पूरा करने में मदद पहुँचा सकता है। वे अपने ज्यादा महत्त्वपूर्ण कामों में से जितना वक्त बच सके, उतना वक्त और यथावकाश सहयोग देने का आश्वासन दे देते हैं। उनके मन में यह पक्का निश्चय होता है कि इसमें आखिरी बात तो हमारी ही मानी जायगी, क्योंकि इतना गहरा और इतने बड़े पैमाने पर परिणाम करनेवाले सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन भला राज्य के सिवा और कौन कर सकता है? आम तौर पर राजनीतिज्ञों का यही रुख है, चाहे आज राज्यसत्ता के सूत्र जिनके हाथों में हैं वे हों या जो उन्हें अपने हाथों में लेने की आकांक्षा रखते हों, वे राज्य और राजनीतिज्ञ भूदान-आन्दोलन की जो कुछ सहायता कर सकते हैं, उनके लिए यह आन्दोलन कृतज्ञता जरूर है, बशर्ते कि वह सहायता ठीक ढंग की हो।

किन्तु अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए वह राज्यसत्ता के

प्रयोग पर निर्भर नहीं है। बल्कि वह दण्ड-शक्ति के बदले जन-शक्ति पर आधार रखता है। गांधीजी ने जो कहा था, उसे जरा हम स्मरण करें—‘हमारे हाथों में सत्ता आ जाने के बाद भी मत-परिवर्तन हमारा अपनी मर्जी से अपनाया हुआ हथियार होगा।’ इसीलिए विनोबाजी जनता के पुरुषार्थ पर इतना जोर देते रहे हैं। क्रान्ति चाहे हिंसक हो या अहिंसक, जनता ही करती है, सरकारें कभी नहीं करतीं। जनता जब क्रान्ति कर लेती है, तब सरकारें उसका अनुसरण करती और अपनी सम्मति की मुहर लगा देती हैं। जैसा कि गांधीजी ने कहा है—‘मत-परिवर्तन के पीछे कानून आता है।’ इसीलिए विनोबाजी कानून के लिए दूसरे कई लोगों की तरह पुकार नहीं मचाते। वे जानते हैं कि जिस दिन लोग अपना काम कर चुके होंगे, उस दिन कानून बनकर रहेगा, चाहे हुकूमत किसी भी पार्टी के हाथ में क्यों न हो।

भूदान और राजनीति

यहाँ हमें भूदान-यज्ञ-आन्दोलन के राजनैतिक दर्शन का परिज्ञान होता है। अपना उद्देश्य सिद्ध करने के लिए सत्ता हाथ में ले लेने की उसकी मंशा नहीं है। अपनी इस नीति के अनुसार वह राज्य पर कब्जा करने के लिए स्वयं एक पार्टी बनाना या बनना नहीं चाहता। इसके बदले उसका यह इरादा है कि सरकार चाहे कुछ करे या न करे, लोग स्वतंत्र रूप से अपने व्यक्तिगत जीवन में क्रान्ति करने के लिए प्रवृत्त हों और उसके द्वारा समाज में क्रान्ति करें। इसके अलावा वह ऐसी परिस्थितियाँ प्रस्तुत करना चाहता है, जिसमें लोग खुद सीधे तौर से अपना इन्तजाम

आप कर लें और उसमें पार्टियों अथवा पार्लमेण्टों का किसी तरह का दखल न हो। अराज्यवाद और कम्युनिज्म की तरह गांधी-दर्शन में भी अन्त में एक राज्य-विहीन समाज की कल्पना है। आज के संसार में राज्य-संस्था अपने सर्वसत्ताधारी रूप में ही नहीं, बल्कि लोक-कल्याणकारी रूप में भी उत्तरोत्तर अधिक सत्ता और अधिक जिम्मेवारी दखल करती जा रही है। लोक-कल्याणकारी राज्य जनता की भलाई के नाम पर मनुष्य को उतना ही गुलाम बनाने पर आमादा है, जितना कि सर्वाधिकारी राज्य। इस बढ़ते हुए लकवे को रोकना लोगों का कर्तव्य है। लोक-कल्याणकारी राज्य लोगों का बनाया हुआ होता है, क्योंकि वे ही उसे खड़ा करते हैं; पर इतने से वस्तुस्थिति में कोई फर्क नहीं पड़ता। लोकतन्त्रात्मक चुनाव की तरकीब से पाँच सौ^१ प्रतिनिधि अठारह करोड़^२ लोगों की बराबरी, सिर्फ प्रौढ़ों को ही गिना जाय, तो कभी नहीं कर सकते। जिस हद तक ये अठारह करोड़ लोग अपना कामकाज प्रत्यक्ष रूप में खुद सँभाल लेंगे, उस हद तक राज्य-संस्था की सत्ता तथा कार्य सीमित होते चले जायँगे और वास्तविक लोकतन्त्र चरितार्थ होगा।

अहिंसक लोकतंत्र की ओर

कम्युनिस्ट देशों का अनुभव यह बतलाता है कि हम तुरन्त जो कदम उठाते हैं, उनका हमारे अन्तिम ध्येय के साथ मेल न

१. भारत की 'लोकसभा' (पार्लियामेंट) की लगभग सदस्य संख्या

२. भारत की आबादी का बालिग हिस्सा।

रहा, तो हम ऐसे मुकामों पर पहुँच सकते हैं जो हमारे लक्ष्य से विलकुल दूसरी तरफ हों। अपने सामने राज्यविहीन समाज का उत्कृष्ट आदर्श रखकर कम्युनिस्ट लोग राज्यसत्ता की मार्फत हरएक बात करने के लिए तत्पर हुए। नतीजा यह हुआ कि राज्य-संस्था हर दिन अधिकाधिक सत्ता हड़पती गयी और राज्य विलीन होने के बदले सर्व-व्यापी राज्य-संस्था अवतीर्ण हुई।

इसी कारण भूदान अथवा सर्वोदय-आन्दोलन का यह आग्रह है कि यदि हमारा अन्तिम लक्ष्य 'राज्य-निरपेक्ष समाज की स्थापना' है, तो आज और इसी समय हमें ऐसी परिस्थितियाँ उपस्थित करनी चाहिए, जिनमें लोग अपने ऊपर अधिक निर्भर रहते चलें और सरकार पर कम निर्भर रहते जायँ। राज्य-संस्था कभी सम्पूर्ण विलीन होगी या नहीं, यह कोई कह नहीं सकता। किन्तु यदि हम अहिंसक लोकतन्त्र के आदर्शों को स्वीकार करते हैं, तो उनके लिए प्रयत्न करना हमें आज से ही शुरू कर देना चाहिए। कहना न होगा कि जो लोग राज्य के बिना काम चलाना चाहते हैं, या राज्य पर कम-से-कम निर्भर रहना चाहते हैं, वे आत्म-नियन्त्रित लोग होंगे—संयमी, न्यायी और अन्योन्य-सहयोगी होंगे।

आखिर में यह भी कह दूँ कि जब संसार के लोग ऐसे बन जायँगे और सरकारें विलीन हो जायँगी या बहुत-कुछ विखर गयी होंगी, तभी दुनिया में शान्ति होगी। यह संभव नहीं है कि सरकारें लड़ाइयाँ बन्द करेंगी। जो जनता सरकारों से छुटकारा पायेंगी, वही यह कर सकेंगी। लेकिन यह विषयान्तर हुआ।

यह हुआ, भूदान-आन्दोलन का राजनीति के प्रति जो रुख है, उसके बारे में। इतना और कह देना बाकी है कि एक अर्थ में भूदान ही अपने में एक उत्कट और गहरा राजनीतिक आन्दोलन है। जो आन्दोलन मनुष्य और समाज में इतनी आमूलाग्र क्रान्ति करने का इरादा रखता है, वह राजनीति-निरपेक्ष नहीं रह सकता। किन्तु उस राजनीति का स्वरूप वैसा है, जैसा कि मैंने ऊपर बताया है। वह राजनीति पार्टियों, चुनावों, पार्लमेण्टों और सरकारों की राजनीति नहीं है। वह लोगों की राजनीति है। इसीलिए वह राजनीति नहीं, बल्कि जैसा कि विनोबा कहते हैं, 'लोकनीति' है।

जीवनदान की विशेषता

आन्दोलन की इस सर्वस्पर्शी व्यापक भूमिका, उसके क्रान्तिकारी और निर्माणकारी स्वरूप तथा उसकी नैतिक और मानवीय वृत्ति के सन्दर्भ में हमें अपने जीवनदान का अर्थ समझना है। मैंने जीवन-दान की कुछ ऐसे आदमियों द्वारा की गयी व्याख्याएँ देखी हैं, जिनसे हमें अधिक बुद्धिमत्ता की अपेक्षा थी। उन लोगों ने दूसरे किसी भी प्रकार के स्वार्थरहित जीवन-समर्पण से जीवन-दान को समकक्ष बतलाकर उसकी सारी विशेषताओं से उसे वंचित कर दिया है। जीवनदान का विशेष आशय यह है कि भूदान अपने सर्वस्पर्शी व्यापक अर्थ में जितने महत्त्व का काम है, उतने महत्त्व का और दूसरा कोई काम नहीं है। इसलिए उसके सामने दूसरी सारी प्रवृत्तियाँ गौण मानी जानी चाहिए। जीवन-दान का आवाहन ठीक इसीलिए हुआ कि कुछ इने-गिने लोगों के सिवा भूदान के काम में जो लोग इकट्ठा हो गये थे, उनमें यह

निष्ठा नहीं थी और इसीलिए इसी एक काम पर सारी शक्ति केन्द्रित करने की वृत्ति भी नहीं थी। पिछले तीन वर्षों के अनुभव ने गांधीजी के क्रान्तिकारी दर्शन और प्रक्रिया की कार्य-क्षमता निःसन्दिग्ध रूप से प्रमाणित कर दी है। ३० अप्रैल, १९५४ तक का पचीस लाख का अखिल भारतीय लक्ष्यांक पूरा हुआ और उसके उपरान्त आठ लाख एकड़ अतिरिक्त जमीन मिली। यह सफलता अपूर्व थी। किन्तु यदि गांधीजी और विनोबा का सन्देश हर गाँव और हर एक घर तक पहुँचाने के लिए काफी संख्या में कार्यकर्ता होते और जिन कार्यकर्ताओं ने प्रत्यक्ष समय दिया, वे अगर उपयुक्त कार्यकर्ता होते तथा वे निष्ठा एवं एकाग्रता से काम करते, तो तैंतीस लाख का अंक आसानी से एक करोड़ तक पहुँच सकता था।

वस्तुस्थिति तो यह थी कि भूदान-कार्यकर्ताओं में से ज्यादातर लोग उमंग और आवेश की घड़ी में काम करते थे। उनमें से बहुतेरे आन्दोलन के मूलभूत सिद्धान्त भी नहीं समझते थे। कई कार्यकर्ताओं ने अपनी जमीन या अन्य सम्पत्ति का उचित हिस्सा तक दान नहीं किया था। बहुत से अपनी पार्टी का फायदा सामने रखकर या आगे कभी अपनी पार्टी के या अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए फायदा उठाने के इरादे से काम करते थे। इस परिस्थिति के रहते हुए भी इतने थोड़े समय में इतना काम हो सका, यह घटना-चमत्कार से कम नहीं है।

युग की चुनौती

किन्तु यदि अहिंसा को हिंसा पर विजय पानी है, तो उसे

तीव्र गति से काम करना होगा। अन्यथा घटना-चक्र आगे बढ़ता चला जायगा और हिंसा की बाढ़ में अहिंसा डूब जायगी। लोगों के सामने निहायत जरूरी समस्याएँ पेश हैं। उन्हें अगर अहिंसा जल्दी हल न करेगी, तो अहिंसक कार्यकर्ता के लिए इतिहास की गति रुकनेवाली नहीं है। वर्तमान समाज-रचना अपने सारे लोभ, लालच, स्वार्थ, मानव-विमुखता, अन्याय, शोषण और विषमता के साथ जानी ही चाहिए। यदि अहिंसा शीघ्र ही उसे नहीं बदलेगी, तो हिंसा कदम बढ़ायेगी। यह दूसरी बात है कि हिंसा कोई भी समस्या हल नहीं कर सकती और एक तरह के अन्याय, शोषण, लोभ और स्वार्थ की जगह दूसरी तरह का अन्याय, लोभ, शोषण और स्वार्थ ले लेगा। पर लोगों के ध्यान में यह बात जब तक आयगी, तब तक समय चूक गया होगा। उस बीच अन्धकार की शक्तियों ने अपना आसन जमा लिया होगा।

इसलिए बोधगया में हम लोगों में से कुछ को यह अनुभूति हुई कि अब परिस्थिति की गंभीरता और तेजी से कदम बढ़ाने की जरूरत हरएक के चित्त पर अंकित करने का समय आ गया है। सारी बातें अनुकूल थीं। युगात्मा हमारे साथ थी। अब तक थोड़ी-बहुत निराशा भले ही हुई हो, फिर भी लोगों का सहयोग उत्कृष्ट था। कमी अगर किसी बात की थी, तो ऐसे एकनिष्ठ और सुयोग्य कार्यकर्ताओं की सेना की थी, जो दूसरे सारे कामों को छोड़कर अपना जीवन अन्त तक इसी महान् आन्दोलन को समर्पित कर दें। इसलिए जीवन-दान का आवाहन हुआ।

एकमात्र रास्ता

बोधगया में और उसके वादियों की तरफ से जो प्रत्युत्तर मिला, वह आश्चर्यजनक है। किन्तु वह काफी नहीं है। जो काम हमें करना है, वह प्रचण्ड है। पाँच करोड़ एकड़ जमीन हस्तान्तरित होनी चाहिए, कम नहीं। जो जमीन मिली है, उसे वांटना है। भूमिहीनों को खेती के साधन दिलाने हैं। जिन गाँवों में भूदान सफल हुआ हो, वहाँ नयी रचना कायम करनी है—पाँच लाख गाँवों में ग्रामराज्य, शहरों और पाट नगरों में सम्पत्ति-दान, अन्त में पूँजीवाद का विलय और कितनी ही दूसरी बातें।

मनुष्य आज आत्म-विनाश की तरफ बेतहाशा बढ़ रहा है। सारी दुनिया एक खतरनाक चट्टान के किनारे पर डबाई डोल रही है। अगर उसे बचाना और सँवारना है, तो एक ही रास्ता है—भूदान या सर्वोदय का। अत्यन्त व्यापक अर्थ में अन्तर्राष्ट्रीय भूदान की आवश्यकता है।

क्रान्ति का मुहूर्त

यह सारा महान् और उदात्त कार्य हमें पुकार रहा है। मैं दूसरी किसी चीज की कल्पना भी नहीं कर सकता, जो हमारी निष्ठा और पुरुषार्थ के लिए इससे अधिक उपयुक्त हो। इस देश में हम करोड़ों हैं। क्या इन करोड़ों में से कुछ हजार भी ऐसे स्त्री-पुरुष नहीं निकलेंगे, जो इतने स्वार्थ-त्यागी, इतने साहसी और इतने दूरदर्शी होंगे कि अपने आपको इस ऐतिहासिक आन्दोलन में खपा देंगे? इस प्रश्न के उत्तर पर भविष्य का इतिहास, कम-से-कम भारत का इतिहास निर्भर रहेगा।

अंग्रेजी राज्य के जमाने में जोशीले नवयुवक सरकारी नौकरियों में जाने से इनकार कर देते थे। बड़ी-बड़ी तनखाहों और ऊँचे-ऊँचे अधिकार-पदों का मोह उन्हें नहीं होता था। अब तो हमारे होनहार नवयुवकों के लिए नौकरी ही मुख्य आकर्षण है। इसमें कोई हर्ज भी नहीं है। किन्तु इनमें से जो अधिक भावना-सम्पन्न और कम स्वयं-केन्द्रित हैं, उन्हें यह समझना चाहिए कि नित्य के शासन-कार्य आवश्यक होने पर भी, राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकते। जिन लोगों के मन में राजनैतिक महत्त्वाकांक्षाएँ हैं उन्हें यह समझना चाहिए कि विधान सभाएँ और सरकारें भी राष्ट्रनिर्माण नहीं कर सकतीं। यदि वे उचित रूप से काम करें, तो इस काम में मदद भर कर सकती हैं। लेकिन वे नुकसान आसानी से पहुँचा सकती हैं। जनता ही स्वयं अपना निर्माण कर सकती है। इसलिए लोगों के पास पहुँचना, उनके साथ रहना और स्वावलम्बी बनने में उनकी सहायता करना सबसे अधिक महत्त्व का काम है।

नवयुवक अपना हृदय टटोलें। क्या वे आसान जिन्दगी चाहते हैं? क्या वे सामाजिक और राजनैतिक चढ़ा-ऊपरी की दौड़ में शामिल होना चाहते हैं? जो इस दौड़ में शामिल होते हैं, वे आखिर जनता की पीठ पर ही सवार होते हैं। मुझे पूर्ण आशा है कि इस देश में ऐसे काफी तरुण-तरुणियाँ हैं, जो एक उदात्त ध्येय के लिए कष्टमय और संकटमय जीवन का आर्लिगन करेंगे। अब खोने के लिए समय नहीं है। मुहूर्त टल रहा है। कल, बहुत देर हो सकती है।

—जयप्रकाश नारायण

जीवनदानियों से

: ३ :

एकाकी पुरुषार्थ

मैं जीवन-दानियों से कुछ कहना चाहता हूँ। लोग पूछते हैं कि 'जीवन-दानियों को क्या मदद मिलेगी?' मैं कहता हूँ कि 'लोगों में उनकी हँसी होगी, यह पहली मदद उनको मिलेगी। भाइयो! पहले आपको उपहास मिलेगा और उसे आपको स्वीकार करना होगा। दूसरी देन यह होगी कि मारे-मारे घूमना होगा। ये दोनों काम आप जब करेंगे, तब आपकी इज्जत होगी।'

एकाकी काम करने की आपको तैयारी रखनी होगी। दूसरा कोई न आये, तो भी 'हमें काम करना है' इस खयाल से आप काम करने निकलें। मैं चाहता हूँ, संकट में आप लोग एक-दूसरे को मदद दें, राहत दें, कंधे से कंधा भिड़ाकर काम करें और आपका एक 'बन्धु-मण्डल' बने। लेकिन उसके साथ आपको यह खयाल रखना है—'एकाकी पौरुषं कुर्यात्'—पराक्रम, परिश्रम अकेले करना चाहिए। उसके लिए दूसरे की बाट जोहना ठीक नहीं।

बाबा जब भू-दान माँगने निकला, तो एकाकी ही निकला—
किसीकी सलाह तक न ली। अगर वह नजदीक के लोगों से

पूछता तो वे कहते—‘पाँच करोड़ एकड़ जमीन गरीबों के लिए, और वह भी हिन्दुस्तान में, नहीं मिल सकती। अगर किसी खास गाँव से मन्दिर या आश्रम के लिए वह लेनी हो, तो मिल जायगी।’ इस तरह उसे अनुकूल सलाह नहीं मिलती। फिर भी परमेश्वर पर विश्वास रखकर वह निकल पड़ा और उसने काम शुरू कर दिया।

पहले तो बाबा अकेला था। साथ में दस-पाँच लोगों की जमात थी। अब आप देखते हैं कि काम बढ़ रहा है। प्रान्त-प्रान्त में काम चल रहा है, जिले-जिले में समितियाँ बनी हैं और बन रही हैं। लोगों की काफी सहानुभूति मिल रही है। तो, इस पर से आपको समझना चाहिए कि पहले तो आपको एकाकी पुरुषार्थ करना है।

इसके लिए आपको अपने जीवन की शुद्धि करनी चाहिए। काम-क्रोध से बचना चाहिए; कारण यह शुद्धि का काम है।

—विनोबा

निरन्तर तपना है

हम जीवन-दान देते हैं, तो यह सोचना चाहिए कि देश के काम में हमारा उपयोग हो और हमसे देश को लाभ हो। इसलिए अपनी शुद्धि भी होनी चाहिए। शुद्धि में कई प्रकार की दीक्षाएँ और शिक्षाएँ आती हैं, खासकर चित्त पर अंकुश रहना चाहिए। जितने भी लोग इसमें आते हैं, उनकी जिम्मेदारी है कि वे अपनी वासनाओं पर काबू रखें। अगर हम विषय-वासना में फँसते

चले जायँगे, तो हमारा काम नहीं चलेगा। अतः विषय-वासना से अधिक-से-अधिक मुक्त रहना चाहिए, हमेशा इन्द्रिय-संयम करना चाहिए।

इसके साथ ही जीवन-दानियों में सबके साथ सहयोग और काम करने की तैयारी होनी चाहिए। निरन्तर काम करते रहना चाहिए। अरविन्द घोष जैसे पाण्डिचेरी में गये और चालीस वर्ष तक ध्यान में मग्न रहे, गांधीजी जैसे स्वराज्य के काम में लगातार लगे रहे, वैसे ही हमें भी लगातार काम करना है। हमें 'रामराज्य' का नमूना बनाना है। अतः हम जिस क्षेत्र में भी जाकर काम करें, समर्पित होकर करें। अहंकार छोड़कर और अपने ऊपर अंकुश रखकर लगातार काम करें। इसमें एक दिन की भी ढिलाई न होनी चाहिए। रोज रात में सोचना चाहिए कि आज दिन भर क्या काम हुआ? जिन पर घर का भी भार है, उन्हें थोड़ा समय घर के काम के लिए भी देना पड़ेगा। लेकिन घर का काम करते हुए भी इस काम का चिन्तन करना चाहिए।

यह समझना चाहिए कि जिसने जीवन-दान दिया है, वह उसने किसीके भरोसे नहीं दिया है। दूसरे लोग नहीं करेंगे, तो भी हमें वह करना ही है। हमने भगवान् को साक्षी रखकर जीवन-दान दिया है। हो सकता है कि मालकियत को पकड़े रखनेवाले लोग प्रहार करें, तब अकेले भी काम करते रहना होगा। इस तरह लगातार काम करने से ही क्रान्ति होती है। अगर क्रान्ति का काम उठाया तो उसमें मर-मिटना पड़ता है। आखिर सोने की शुद्धि कैसे होती है? जैसे-जैसे वह तपता

है, वैसे-वैसे ही उसकी शुद्धि होती है। इस तरह लगातार काम करनेवाले लोग हमें चाहिए। जहाँ निरन्तर काम करनेवाले लोग हों, वहाँ दो-चार दिन काम करनेवाले लोगों को भी अगर आप ले जाते हैं, तो काम हो जाता है। अखण्ड सेवक और बीच-बीच में काम करनेवाले लोग, इस तरह साथ-साथ मिलकर काम करें, तो काम अच्छा होता है। किन्तु इसके लिए आवश्यक है कि हमारा जीवन सतत साधनाशील हो। हमें सोने के समान निरन्तर तपना होगा।

जगदीशपुर (बिहार)

—बिनोबा

२७ मई, १९५४

आचरण के सूत्र

जीवन-दान में घबड़ाने जैसी कोई बात नहीं है। यह भी मानने की जरूरत नहीं कि 'जब तक हम शुद्ध नहीं हुए, तब तक हमारा जीवन-दान हो ही नहीं सकता।' क्योंकि हृदय की एक बार की शुद्धि कोई पूर्ण क्रिया नहीं, वह तो सतत जारी रहनेवाली क्रिया है। इसलिए उसकी तरफ हमारा पूरा ध्यान रहे, और हम सावधान रहें, तो हृदय-शुद्धि की क्रिया सतत होती रहेगी, जो होनी भी चाहिए।

ऐसा कहकर सन्तोष कर लेने का अवसर नहीं आया, जब मानव कह सकेगा कि 'अब तो मेरे हृदय की शुद्धि हो चुकी और इस विषय में करने को कुछ बाकी नहीं रहा।' सच तो यह है कि आत्म-संशोधन के परिणामस्वरूप उसे अपने कुछ-न-कुछ

दोष हमेशा दीखते ही रहेंगे। हम उन दोषों से अपने को भिन्न समझकर उन्हें सतत दुस्त करने की कोशिश करते रहें, इतना ही जरूरी है। अगर कोई इसका यह अर्थ कर बैठे कि जिनके हृदय की शुद्धि नहीं हुई है, उनके जीवन का दान हो ही नहीं सकता, तो वह ठीक नहीं होगा। कहा गया है कि कचरे का दान नहीं हो सकता। उसका सार ग्रहण करना चाहिए। वह यह कि अगर हम अपने जीवन की शुद्धि की कोशिश न करेंगे, तो जीवन-दान हो ही नहीं सकेगा। याने मानव बाहर से कह दे कि 'मैं अपना जीवन अमुक काम के लिए समर्पित करता हूँ' और उसके अन्दर जो नाना तरह के विकार हैं, उस तरफ ध्यान ही न दे और ऐसा ही जीवन चलता रहे, तो वह उसका सही दान न होगा। वह चल भी न सकेगा।

अकेले जूझने का मौका

इसके अलावा, जब हम किसी एक काम के लिए अपने को समर्पित करते हैं, तो दूसरों से बहुत ज्यादा मार्गदर्शन की अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए। जीवनदान का अर्थ अगर कोई यह समझता हो कि 'अमुक के चरणों में, अमुक के हाथों में हमने अपना जीवन सौंप दिया', तो वह ठीक नहीं है। जीवन जब एक कार्य के लिए अर्पण हो जाता है, तो परमेश्वर के नाम पर उस कार्य के विषय में सतत चिन्तन करने, रास्ता ढूँढ़ने और काम करने की, चाहे दूसरों से कोई मदद मिले या न मिले, जिम्मेदारी आ जाती है। और ऐसे प्रसंग खासकर क्रान्तिकारी आन्दोलनों में बहुत दफा आते हैं, जब कि बहुत सारी जमात किसी समय विरुद्ध

ॐ शुशु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय ॐ

वा रा ण सी ।

आगत क्रमांक..... 0749.....

हो जाती है। किन्तु चूँकि अब तक सारा रास्ता बिलकुल सीधा, सुरक्षित और खतरे से खाली रहा, इसलिए वह हमेशा ऐसा ही रहेगा—ऐसा मानने का कोई कारण नहीं। क्योंकि आगे कदम उठाने पड़ते हैं, तब कुछ लोगों को थकान भी आती है और कुछ साथी उस समय तक काम करने के बाद ऊबकर वापस भी चले जाते हैं। ऐसी हालत में अकेले जूमने का समय आ सकता है। राणा प्रताप की कहानी तो आपने सुनी ही होगी। वे हिंसक हथियार लेकर लड़ते थे, इस वास्ते उनको जंगलों और पहाड़ों में मारा-मारा घूमना पड़ता था। हम अहिंसा से काम करनेवाले हैं, इसलिए हम पर कोई खतरा या संकट आयगा ही नहीं, ऐसी बात नहीं है। हमारी बात जब तक चुभती नहीं, तब तक तो लोग उसे स्वीकार करते हैं, लेकिन जब वह चुभेगी और ऐसी हालत पैदा होगी, जिसके कारण राजनीति पर दबाव पड़े, तो उस वक्त यह संभव मान लेना चाहिए कि हमें शायद अकेले ही काम करना पड़े और विरोध के बीच करना पड़े।

लेकिन इससे हमें घबड़ाना नहीं है। जैसे कुँआ खोदते-खोदते जब पहले मिट्टी निकलती है, तब तो जल्दी-जल्दी खुदता है। किन्तु आगे खोदने लगते हैं, तो अचानक पत्थर सामने आता है। जिस तरह कुँआ खोदने में पत्थर आने पर मुश्किल से काम होता है, उसी तरह आन्दोलन में भी आगे कुछ कठिनाइयाँ आना संभव है। अतः जीवन-दानियों को ध्यान रखना चाहिए कि उन्हें गंभीरता और शान्ति से काम करना है—समझ-बूझकर, मन को हर स्थिति के लिए तैयार रखकर काम करना है।

अति सर्वत्र वर्जयेत्

बहुत ज्यादा काम कर डालें और उससे महीने दो महीने में ही शरीर बहुत थक जाय और फिर उसकी प्रतिक्रिया हो, तो यह भी नहीं होना चाहिए। एकबारगी सारी शक्ति खर्च नहीं कर डालनी चाहिए, बल्कि शान्ति से सब काम सतत चलना चाहिए। जो पैदल यात्रा करनेवाले साथी होंगे, उनकी तो सेहत सुधरनी ही चाहिए। तभी हम कहेंगे कि वे यशस्वी (सफल) हैं। अगर प्रवास के कारण किसीकी तन्दुरुस्ती बिगड़ती है, तो यही कहा जायगा कि उसके जीवन में योग नहीं सधा। जीवन-दान करनेवाले का जीवन तो योगयुक्त होना चाहिए। जैसे आज हम काफी देरी से सोने जा रहे हैं, पर यह जीवन-दान में सदा नहीं चल सकता। उसमें तो नौ बजे सोने और बहुत सुबह उठने की तैयारी होनी चाहिए, तभी वह योगयुक्त जीवन होगा। जब कि शरीर द्वारा काम लेना है, तब तो उसे भी औजार समझकर काम करना होगा, किसी प्रकार का अतिरेक न होना चाहिए। गांधीजी के उदाहरण से हमें यह बहुत अच्छी तरह समझ में आ सकता है। उन्होंने अपना जीवन बहुत ही समत्व-युक्त किया था। खान-पान, आहार-विहार सभी में उनका समत्व रहा। राजनीति और विभिन्न सामाजिक कार्यों में सतत काम करते रहनेवालों में इस तरह का उदाहरण शायद ही दीख पड़ेगा। कुछ लोग होंगे, जो एकान्तप्रिय हों, ध्यानयोगी हों, उनके जीवन में ये बातें होती हैं। परन्तु समाज में सतत काम करनेवाले मनुष्य का ऐसा उदाहरण बहुत कम देखने में आता है। गांधीजी अस्सी

वर्ष तक सतत काम करते रहे, तब भी उनका दिमाग तेजस्वी ही बनता गया। जैसे-जैसे बुढ़ापा आया, वैसे-वैसे उनकी प्रज्ञा तेजो-हीन नहीं, तेजस्वी ही होती गयी। इसलिए जिन्हें सतत काम करना है, जिन्होंने जीवन-दान दिया है, उनके जीवन में योग-युक्त आचरण होना चाहिए। ये जो तीन बातें जीवन-दानियों के आचरण के बारे में सहज कह सकता था, मैंने कह दीं।

आजीविका का प्रश्न

फिर सवाल यह आयगा कि जिन्होंने जीवन-दान दिया है, उनकी आजीविका का क्या हाल होगा? हमारे खयाल से यह कोई कठिन सवाल नहीं होना चाहिए। वास्तव में ऐसा सवाल उठना भी नहीं चाहिए, क्योंकि जिन्होंने जीवन-दान किया है, वे अपने पाँवों पर खड़े रहने में समर्थ हो सकते हैं। किन्तु जहाँ एक जमात काम करने जाती है, वहाँ ऐसों के लिए कुछ विचार या कुछ उपाय-चिन्तन करना गलत नहीं होगा; बल्कि उचित होगा और वह हो भी सकेगा। वह 'संपत्तिदान-यज्ञ' के जरिये होना चाहिए, ऐसा हमारा आग्रह है। अभी तो गांधी-निधि से 'सर्व-सेवा-संघ' की मार्फत पैसा मिलता है, जो आगे भी मिलेगा, पर उस पैसे को हम महत्त्व नहीं देते। जरूरी काम तो यह होना चाहिए कि सम्पत्तिदान का प्रवाह बढ़ते रहना चाहिए ताकि उसमें से कार्यकर्ताओं का कुछ-न-कुछ पोषण होता रहे। अब कार्यकर्ताओं को जो दिया जायगा, वह आकर्षक जैसा नहीं होगा। ऐसा आकर्षक वेतन इसमें मिलनेवाला भी नहीं है। वह तो केवल जिन्दगी बिताने के लिए होगा। प्राण कायम रहे

और शरीर का सन्तुलन बना रहे, इस वास्ते जो चाहिए उतना ही मिल सकेगा। बहुत ज्यादा तो उनको मिलनेवाला नहीं है। इस तरह सम्पत्तिदान के जरिये ऐसे लोगों को कुछ जरूर दिया जा सकता है और इसका आयोजन होना चाहिए।

इनकी ट्रेनिंग (प्रशिक्षा) का भी काम होना चाहिए। आपको मालूम ही है कि जिन्होंने अपना समय देना तय किया है, वे अगर कुशल न रहें, शक्तिशाली न रहें तो उनका समय लेकर भी उसका समुचित उपयोग नहीं होगा। इसलिए उन्हें तालीम देने की योजना भी चाहिए। पर यह तो साधारण-तया शिविरों द्वारा हो ही सकती है। और कुछ ऐसे आश्रम भी हमें स्थान-स्थान पर कायम करने पड़ेंगे, जहाँ ऐसा काम करने वाला जीवनदानी बीमार पड़ जाय, तो वह वहाँ आकर महीना-पन्द्रह रोज रहे एवं उसकी सेवा वहाँ हो। इस तरह सेवा करने-वालों का भी स्थान, जिसे हम गृह कहते हैं, हर एक जिले में हो तो अच्छा है। लेकिन कम-से-कम एक-एक प्रान्त में एक-दो जगहें ऐसी हों ही, जहाँ पाँच-दस दिन किसीको कुछ आराम करने को मिले। कुछ ज्ञान भी विश्राम के साथ-साथ प्राप्त हो और उसे कोई बीमारी हो, तो उसका भी इलाज वहाँ हो। इस तरह उस मनुष्य को राहत मिलने की योजना भी करनी पड़ेगी। ट्रेनिंग के साथ-साथ यह भी करना पड़ेगा।

हँसते हुए चेहरे

जीवन-दान में क्या-क्या चीजें आती हैं ? यह जब पूछा जाता है, तब मैं कहता हूँ—यह सब उसमें आता है। उसमें जमीन

की सेवा भी आती है और सेवा करते-करते सोचना भी। हममें सहनशीलता भी होनी चाहिए और हमारा चेहरा सदा प्रफुल्लित (प्रसन्न) रहना चाहिए। जिन्होंने जीवन-दान किया, उनके चेहरे सदा खुश ही दीखने चाहिए। क्राइस्ट (ईसा) ने अपने शिष्यों से कहा था कि 'उपवास न करो और अगर करते ही हो तो आपका चेहरा प्रफुल्लित रहे, अन्यथा लोग कहेंगे कि उपवास करनेवालों का चेहरा ऐसा होता है।' जेल में हम लोगों की दाढ़ी अक्सर बढ़ जाती थी। जमनालालजी हमारे बीच थे। मिलने के लिए कोई मुलाकाती आया तो उससे मिलने जाने के पहले वे हमसे कहते—'विनोबाजी, आपको हजामत करा लेनी चाहिए।' मैं पूछता—'क्यों?' तो वे कहते—'हम मुलाकात के लिए आनेवालों को यह जानने देना नहीं चाहते कि यहाँ हमारा चेहरा कैसा रूखा-सूखा है। किसी भी तरह हमारा चेहरा उन्हें दया का पात्र न दीखे।' अतः हमारे जितने कार्यकर्ता हैं, उन सबके चेहरे हँसते हुए, दूसरों से प्रेम पूर्वक मिलने के लिए उत्सुक और शान्त होने चाहिए।

—विनोबा

जीवनदानी से अपेक्षाएँ

(१)

हमारी क्रांति अहिंसक है, भूदान-मूलक है और ग्रामोद्योग प्रधान है। इसलिए जो पेशे हिंसा-मूलक हैं, शोषण पर आधार रखते हैं और ग्राम-उद्योगों के खिलाफ हैं, ऐसे कोई पेशे या रोजगार जीवनदानी नहीं करेंगे। आज कोई जीवनदानी अगर इस तरह का पेशा या धन्धा करता हो, तो वह उसमें से जल्द-से-जल्द मुक्त होने की कोशिश ईमानदारी से करेगा। अगर वह खेती या दूसरे किसी उत्पादक परिश्रम से गुजर करता है, तो जितनी जमीन उसके और उसके परिवार के निर्वाह के लिए जरूरी है, उतनी रखकर बाकी भूदान में दे देगा। जो खेती के सिवा दूसरी तरह का परिश्रम करता हो, वह अपनी कमाई में से गुजर के लायक रखकर शेष सम्पत्ति-दान में देगा। जीवन-दानी पारिवारिक कामों के लिए कम-से-कम आवश्यक वक्त देगा, ज्यादा वक्त भूदान-यज्ञ के काम के लिए देगा।

इसके अलावा जीवनदानी नीचे लिखी बातों पर अमल करेगा :

१—जीवनदानी का जीवन जहाँ तक सम्भव हो सके, सादा हो। वह खादी नियमित रूप से पहने। खाद्य-वस्तुओं में भी यथासम्भव ग्रामोद्योगी वस्तुओं का ही इस्तेमाल करे। अपनी पत्नी तथा बच्चों को भी खादी, नयी तालीम इत्यादि की ओर प्रवृत्त करे।

२—जहाँ तक हो सके, जीवनदानी को नियमित रूप से शरीर-श्रम करना चाहिए।

३—कोई भी व्यक्ति यह सोचकर जीवनदान न करे कि कोई व्यक्ति या संस्था उसके निर्वाह-व्यय का प्रबन्ध करेगी। उसे यह विश्वास होना चाहिए कि जब वह अपना जीवन समाज की सेवा में अर्पण करने जा रहा है, तो समाज उसे भूलेगा नहीं। इस विश्वास से अधिक और किसी प्रकार के आश्वासन की अपेक्षा उसे नहीं करनी चाहिए। जीवनदान किसी भी प्रकार की नौकरी नहीं है। जीवनदानी की जीविका का जिम्मा न किसी व्यक्ति ने लिया है और न किसी संस्था ने। हजारों नहीं, लाखों जीवनदानियों की आवश्यकता है। हर गाँव में दो-चार जीवनदानी होने चाहिए। इतने लोगों का जिम्मा कौन-सा व्यक्ति या संस्था ले सकती है? सारा समाज या राष्ट्र ही यह कर सकता है।

४—भूदान-आंदोलन एक क्रांति का रूप तभी लेगा, जब कि आम जनता उसे अपने जीवन में उतार लेगी। इसके लिए असंख्य कार्यकर्ताओं तथा जीवन-दानियों की आवश्यकता है। उनका संगठन भी मुक्त तथा व्यापक होना चाहिए। इसलिए यह वांछनीय है कि हर छोटे-छोटे हलके में स्थानीय जीवनदानी तथा अन्य भूदान-कार्यकर्ता मिलकर एक-एक आश्रम की स्थापना करें। यह आश्रम अपने हलके की भूदान-प्राप्ति, वितरण, निर्माण तथा अन्य सभी सर्वोदय-प्रवृत्तियों का केन्द्र बने। पूरा समय देनेवालों का वही घर हो, जहाँ उनके वच्चे तालीम पावें। जहाँ काम से थककर वे विश्राम के लिए आ सकें और जहाँ उन्हें परिवार का-सा स्नेह मिले। आश्रम की अपनी खेती के लिए थोड़ी-सी जमीन हो और साथ-साथ कुछ उद्योग भी चलें,

जिनमें सभी श्रम करें और अपनी आवश्यकता की कुछ वस्तुएँ पैदा करें। हर आश्रम स्वावलम्बी हो और अपने हलके की जनता के सहयोग से उसका निर्वाह चले।

यह योजना वर्तमान प्रारम्भिक काल के लिए है। कार्य का विस्तार होने पर गाँव-गाँव में जीवनदानी होंगे और उनके घर ही गाँव की सर्वोदय-प्रवृत्तियों के केन्द्र बनेंगे।*

(२)

[श्री धीरेन भाई ने अपना जीवनदान करते समय जो निवेदन किया था, वह यहाँ दिया जा रहा है।]

ईश्वर की प्रेरणा से भाई जयप्रकाश ने जीवनदान का जो आवाहन किया, उसके जवाब में मैं भी अपना नाम लिखा रहा हूँ।

मैंने काफी घबड़ाहट के साथ अपना नाम लिखाया है, क्योंकि इस आवाहन की जो मूल प्रेरणा है और उस प्रेरणा के पीछे नाम देनेवालों की जो जिम्मेवारी है, उसका मुझे भान है। भाई जयप्रकाश ने सहज ही यह आवाहन किया है। जैसा मैंने समझा है, आज की भूदान-प्राप्ति और वितरण के लिए ही उन्होंने हमारा जीवन नहीं माँगा है। भूमिदान के मूल में जो विभिन्न मन्त्र हैं, उनकी दीक्षा के लिए ही हमारा आवाहन किया गया है। भूमिदान-यज्ञ में जो जीवन-क्रान्ति और समाज-क्रान्ति है, उसे दृष्टि में रखकर यज्ञ की आहुति देनेकेलिए उन्होंने हमें बुलवाया है। जयप्रकाश बाबू ने केवल कार्यकर्ता बटोरने के लिए यह सामान्य आवाहन नहीं किया है। वैसा होता तो विनोबा को, भगवान् प्रेरणा

* श्री जयप्रकाश नारायण तथा दादा धर्माधिकारी के लेखों के आधार पर।

नहीं देते कि तुम भी अपना नाम लिखाओ। यह एक पवित्र आरंभ है। उसके लिए हम अपने को तैयार करते हैं। हमारी तैयारी आजीवन चलेगी। जीवन-दान का यही मतलब है।

क्या तैयारी चाहिए ?

इसके लिए हमें क्या-क्या तैयारी करनी होगी, सो थोड़े में बतलाता हूँ। यह एक क्रान्ति है। समाज में साम्ययोग की स्थापना के लिए शोषण-हीन समाज की पूर्णता के लिए शासन-विहीनता तक जानेवाली यह क्रान्ति है। साध्य और साधन की दृष्टि से इस क्रान्ति का आवाहन ऐसा होना चाहिए, जो अपने में क्रान्तिकारक हो। जिन जीवन-मूल्यों को हम बदलना और नये मूल्य कायम करना चाहते हैं, वे नये मूल्य हमारे जीवन में दाखिल होने चाहिए और पुराने मूल्य निकल जाने चाहिए। व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन का, कलाकार की कुशलता से एक सुन्दर चित्र बनाना है। हमें जीवन-क्रान्ति का औजार अपने आपको बनाना है। क्रान्ति का चित्रकार अपनी तूलिका को अच्छी तरह धोकर साफ करेगा। जब वह देख लेगा कि उसमें पुराना रंग लेशमात्र भी नहीं रह गया है, तब नया चित्र बनायेगा, नहीं तो चित्र बदरंग हो जायगा। हम सब समझ लें कि हमें अपने आपको किस रंग में रँगाना है। जो भाई-बहन जीवन-दान का संकल्प करते हैं, वे खूब समझ लें कि पुराना जीवन-दर्शन अब न चलेगा। उसका कुछ अवशेष रह गया हो, तो अब उसे धो डालना चाहिए।

भारत की परिपाटी यह रही है कि यहाँ सारे यज्ञ सपत्नीक होते हैं। स्वयं श्री रामचन्द्रजी भी एकाकी यज्ञ नहीं कर सके, उन्हें भी सोने की सीता को बगल में लेकर बैठना पड़ा। अतः

नाम देने से पहले इस बात का विचार कर लेना चाहिए। अपने परिवार के साथ सलाह कर लेनी चाहिए और क्रान्ति के सभी मूल्यों का ध्यान रखना चाहिए। यह कोई जरूरी बात नहीं कि काफी तादाद में नाम आयें। लेकिन जो आयें, वे खूब सोच-समझकर आयें।

क्रान्ति की सौगात

कुछ लोग तो यह भी पूछते हैं कि इस यज्ञ में शामिल होने से हमें क्या मिलेगा ? मैं पूछता हूँ, इतिहास में क्रान्तिकारी को क्या मिला है ? समाज की उपेक्षा, उपहास, विरोध और शासन की ओर से दण्ड और दमन ! यही क्रान्तिकारियों को नसीब हुआ है। वही सब आपको भी नसीब होगा। अब तक की क्रान्तियों में तो दो पक्ष होते थे। इसलिए एक वर्ग की सहायता मिलती थी। किन्तु हमारी क्रान्ति वर्ग-निराकरण के लिए है। इसलिए इसकी प्रक्रिया में ही वर्ग-निराकरण शुरू हो जाता है। हमें शोषित और शोषक—दोनों में क्रान्ति करनी है। इसलिए दोनों ओर से विरोध और दमन होगा। हम स्वयं शोषक वर्ग में आये हैं। हमारे वर्ग ने शोषितों को पहले कई बार धोखा दिया है। इसलिए वे अज्ञान और अविश्वास के कारण हमें सतायेंगे। शोषक भी हमें अपना विरोधी मानेंगे। इस तरह हमारी किस्मत में दोनों तरफ से विरोध लिखा है। पुरानी क्रान्तियों से यह क्रान्ति कहीं अधिक क्रान्तिकारी है। इसलिए क्या मिलेगा, मत पूछिये। यहाँ तो सिर में कफन बाँधकर आना है।

—धीरेन्द्र भाई मजूमदार

हमारे प्रकाशन

(विनोबा)

गीता प्रवचन	१)
त्रिवेणी	॥॥
विनोबा-प्रवचन (संकलन)	॥॥
भगवान् के दरबार में	२)
साहित्यिकों से	॥॥
गाँव-गाँव में स्वराज्य	॥

(धीरेन्द्र मजूमदार)

शासन-मुक्त समाज की ओर	॥२)
आजादी का खतरा	॥७)
बापू की खादी	॥॥
क्रान्तिकारी चरखा	॥७)
युग की महान् चुनौती	॥
नयी तालीम	॥॥
स्वराज्य की समस्या	॥॥
चरखा-आन्दोलन की दृष्टि और योजना	३)

ग्रामराज	॥७)
----------	-----

(श्रीकृष्णदास जाजू)

संपत्तिदान-यज्ञ	॥
व्यवहार-शुद्धि	॥२)
अ० भा० चरखा संघ का इतिहास	३॥॥

चरखा-संघ का नव-संस्करण	१॥॥
चरखे की तात्त्विक मीमांसा-हि० अं० १)	

(जे० सी० कुमारप्पा)

गाँव-आन्दोलन क्यों ?	३॥॥
गांधी अर्थ-विचार	१)
स्थायी समाज-व्यवस्था (भाग २रा)	२)
श्रम-मीमांसा और अन्य प्रबन्ध	॥॥
खून से सना पैसा	॥॥
जनता की आजादी	१॥॥
यूरोप : गांधीवादी दृष्टि से	॥॥
वर्तमान आर्थिक परिस्थिति	१॥॥
ग्रामों के सुधार की योजना	१॥॥
स्त्रियाँ और ग्रामोद्योग	॥
राजस्व और हमारी दरिद्रता	२॥॥
हिन्दुस्तान और ब्रिटेन का आर्थिक लेन-देन (हि० गु०)	॥॥

(दादा धर्माधिकारी)

मानवीय क्रान्ति	॥
साम्ययोग की राह पर	॥
क्रान्ति का अगला कदम	॥

(जयप्रकाश नारायण)

जीवनदान	॥
---------	---

(अन्य लेखक)

सर्वोदय का इतिहास और शास्त्र—शंकरराव देव	११
श्रम-दान—शिवाजी भावे	११
विनोबा के साथ—निर्मला देशपाण्डे	११
पावन प्रसंग—मृदुला मूंदड़ा	१२
भूदान आरोहण—नारायण देसाई	११
राज्यव्यवस्था : सर्वोदय दृष्टि से—भगवानदास केला	१११
गो-सेवा की विचारधारा—राधाकृष्ण बजाज	११
भूदान-यज्ञ (नाटक)—गोविन्ददास	११
सन्त विनोबा की उत्तर भारत यात्रा—दामोदरदास मूंदड़ा	११
भूदान दीपिका—विमला बहन	११
साम्ययोग का रेखाचित्र—विमला बहन	११
पूर्व बुनियादी तालीम—शान्ताबाई नारूलकर	११
नवभारत—रामकृष्ण शर्मा	४१
गाँव का गोकुल—अप्पासाहेब पटवर्धन	११

आगामी प्रकाशन

विनोबा की आनन्द-यात्रा—सुरेश रामभाई	
वितरण—सर्व सेवा संघ, गया	
सुन्दरपुर की शाला का पहला घंटा—जुगताराम भाई दवे	
अहिंसक अर्थ-शास्त्र और विश्व-शान्ति—जे० सी० कुमारप्पा	
सफाई-शास्त्र—वल्लभस्वामी	
शिक्षण विचार—विनोबा	
कार्यकर्ता-वर्ग—विनोबा	
ज्ञानदेव चिन्तनिका—विनोबा	

(उर्दू-साहित्य)

भूदान	३१	विनोबा का पैगाम	३१
विनोबा की झाँकी	३१	भूदान लहरी	३१
भूदान : सवाल-जवाब	३१	भूदान तहरीक क्या है ?	३१
भूदान की तमहीद	३१		

[ENGLISH PUBLICATIONS]

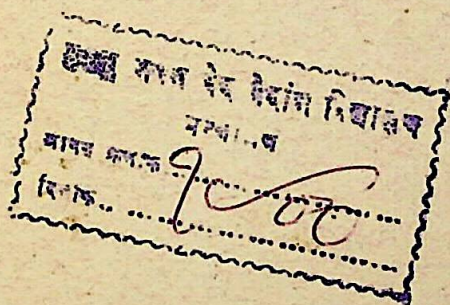
Vinoba & His Mission	3-0	Philosophy of Work and	
Bhoodan-Yajna : The Great		other Essays	0-12
Challenge of the Age	0-4	Peace and Prosperity	1-0
Bhoodan-Yajna	1-8	Present Economic Situa-	
Revolutionary Bhoodan		tion	2-0
Yajna	0-4	Peoples China—What I saw	
Principles and Philosophy		and Learnt there ?	0-12
of Bhoodan	0-5	Plan for Economic Deve-	
Swaraj-Shastra	1-0	lopment of N. W. F.	0-13
Sarvodaya & World peace	0-2	Science and progress	1-0
Lessons from Europe	0-8	Stonewalls and Iron Bars	0-8
Non-Violent Economy		Unitary Basis for a Non-	
and world Peace	1-0	Violent Democracy	0-10
Banishing War	0-8	Why the Village Move-	
Currency Inflation—Its		ment	3-8
Cause and cure	0-12	Women and Village	
Economy of Permanence		Industries	0-4
(2 vols) Each	2-0	Demand of the Times	0-12
Gandhian Economy and		Elements of Village	
Other Essays	2-0	Administration and Law	1-0
Our Food Problem	1-8	Whither Constructive	
Overall plan for Rural		work	0-10
Development	1-8	Economics/of Peace : The	
Organisation and Accounts		Cause and the Man	100
of Relief work	1-0		

❀ सुप्रसन्न मन्त्र वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय ❀

वा रा ग सी ।

आगत क्रमांक.....

0749



ईसा ने अपने साथियों से कहा था, 'तुम इस बहु-रत्ना वसुन्धरा के नमक हो।' तब उसका अभिप्राय यह था कि तुम्हारी निष्ठा और तुम्हारी कार्यकुशलता से इस मृत्युलोक के जीवन में भी लुत्फ और लज्जत आयगी। लेनिन ने अपने साथियों से कहा था कि हमें ऐसे क्रान्तियोगी चाहिए जो क्रान्ति के लिए केवल अपनी फुरसत की साँझ ही नहीं, वरन् अपनी सारी जिन्दगी न्यौछावर कर देंगे। किसीने शंका उठायी, 'कितने आदमी मिलेंगे जो अपनी जिन्दगी कुरबान कर देंगे?' लेनिन ने कहा, 'मुझे कितने की फिक्र नहीं है, थोड़े ही हों, लेकिन अच्छे हों; इने-गिने ही हों, लेकिन पक्के हों; अपनी बात के धनी और क्रान्ति के मतवाले।' सवाल यह नहीं है कि जीवनदानी कितने हैं और वे समाज के किस स्तर से आये हैं। सवाल यह है कि क्या वे धुन के पक्के हैं? क्या उन्हें इन्कलाव की लगन लगी हुई है ?

—दादा धर्माधिकारी



मूल्य
चार आना